ISSN 2394-8485

मासिक

गुरमत ज्ञान

३/-

चेत-वैसाख संवत् नानकशाही ५५४ अप्रैल 2022 वर्ष १५ अंक ८

गुरुद्वारा साहिब गुरु का लाहौर, श्री अनंदपुर साहिब

भक्त धंना जी

ISSN 2394-8485

ੴ सतिगुर प्रसादि

गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ॥

मासिक

गुरमत ज्ञान

चेत-वैसाख, संवत् नानकशाही 554
वर्ष 15 अंक 8 अप्रैल 2022

मुख्य संपादक : सिमरजीत सिंघ
संपादक : सतविंदर सिंघ
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	10 रुपये
आजीवन (देश)	100 रुपये
सालाना (विदेश)	250 रुपये
प्रति कापी	3 रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी

(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर साहिब -143006

फोन : 0183-2553956-60

एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग 303 संपादन विभाग 304

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार 4

संपादकीय 5

. . . श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी 7
-डॉ. मनजीत कौर

'आपे गुरु चेला' के संकल्प की महानता 14
-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मानव जीवन-युक्ति 17
- प्रिं. लाभ सिंघ (दिवंगत)

खालसा पंथ के पाँच तख़्त 24
- डॉ. सुखदिआल सिंघ

परची भक्त धंना जी की 28
-डॉ. धरम सिंघ

आदर्श सामाजिक व्यवस्था का प्रतीक : खालसा 31
-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ

सांझीवालता एवं सरबत्त का भला 37
-डॉ. शमशेर सिंघ

दुखु दारू सुखु रोगु भइआ 43
-डॉ. परमजीत कौर

अमर शहीद सरदार सेवा सिंघ ठीकरीवाला 46
-स. जगजीत सिंघ ठीकरीवाला

ख़बरनामा 48

गुरबाणी विचार

वैसाखि धीरनि किउ वाढीआ जिना प्रेम बिछोहु ॥
हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु ॥
पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु ॥
पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ॥
इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि ॥
दयु विसारि विगुचणा प्रभ बिनु अवरु न कोइ ॥
प्रीतम चरणी जो लगे तिन की निरमल सोइ ॥
नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ ॥
वैसाखु सुहावा तां लगै जा संतु भेटै हरि सोइ ॥३ ॥ *(पन्ना १३३)*

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी बारह माहा मांझ की इस पावन पउड़ी में वैसाख मास के वातावरण एवं मौसम तथा इसमें की जाने वाली क्रियाओं की सांकेतिक पृष्ठभूमि में मनुष्य-जीवन रूपी इस कालखंड को प्रभु-नाम-सिमरन द्वारा उपयोग में लाने तथा सफल करने का गुरमति मार्ग बख्शिश करते हैं।

गुरु जी फरमान करते हैं कि वैसाख मास में भले ही जनसाधारण की ख्वाहिशें-उमंगें फलीभूत होती हों परंतु इस मास में भी उन जीव-स्त्रियों का हृदय धैर्य धारण नहीं कर सकता जो कि प्रभु-भक्ति अथवा प्रभु-प्रेम से दूर हैं। परमात्मा ही आत्मा का मित्र है और अज्ञानतावश उसी एकमात्र मित्र को भुला देने से धैर्य आ भी नहीं सकता, क्योंकि उसको सांसारिक माया ने अपनी तरफ खींच लिया है।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि न पुत्र, न स्त्री और न धन ही मनुष्य का साथ देता है। साथ देने वाला तो सदैव स्थिर प्रभु ही है, लेकिन दुखदायक स्थिति यह है कि कुछ एक चुनिंदा गुरमुखों को छोड़कर समस्त संसार मोह या सांसारिक लगाव के व्यवसाय में खचित होकर आत्मिक मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं। वे इस रहस्य को समझते नहीं कि मात्र प्रभु-नाम ही आगामी जीवन में काम आता है, शेष सांसारिक कार्य यहीं रह जाते हैं अर्थात् वे आत्मिक जीवन का अंग नहीं बन पाते। प्रेम-स्वरूप प्रभु को भुलाकर सब कुछ बर्बाद होना निश्चित है, क्योंकि उसके बिना कुछ भी स्थिर रहने वाला नहीं है।

पंचम पातशाह चुनिंदा गुरमुखजनों की स्थिति दर्शाते हुए कथन करते हैं कि जो जन प्यारे प्रभु के चरणों के साथ जुड़ गए हैं अथवा उसकी प्रेमा-भक्ति में रत हो गए हैं उनकी शोभा निर्मल है। विनती है कि हे प्रभु! हमें अपने साथ मिला लो, क्योंकि वैसाख रूपी जीवन-खंड सुहावना तभी है जब पूर्ण संत अथवा सतिगुरु के साथ भेंट हो जाए और वह प्रभु के साथ मिलाप का सबब बना दे।

संपादकीय

प्रगटिओ खालसा प्रमातम की मौज

खालसा अरबी भाषा का शब्द है। इस शब्द से तात्पर्य है-- वह ज़मीन-जायदाद, जिसका सम्बंध सीधा बादशाह के साथ है। खालसा भी अपरोक्ष रूप से अकाल पुरख वाहिगुरु के साथ संबंधित है। खालसा स्वतंत्र है। यह स्वतंत्रता हलतमुखी भी है तथा पलतमुखी भी। खालसा अपने पांच ककारी पहनावे द्वारा विलक्षण पहचान रखता है। अपने खालसाई स्वरूप को बनाए रखने के लिए हर सिक्ख प्रतिदिन अकाल पुरख के समक्ष अरदास कर सिक्खी दान, केश दान तथा रहित दान मांगता है। गुरु साहिब द्वारा बख्शिश किए पांच ककारी पहनावे को प्यार करना और इनके आदर्शों के अनुसार जीवन जीना गुरमति-भक्ति के लिए अति ज़रूरी है। संतोषी सिक्खों ने स्वस्थ समाज-सृजना में जो योगदान दिया है वह इतिहास में विशेष स्थान रखता है।

गुरु साहिबान ने जिस समाज को सुधारने का इंकलाबी बीड़ा उठाया था वो एक तरफ मुगल हुकूमत की गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था और दूसरी तरफ उस पर ब्राह्मणवाद ने बुरी तरह से पकड़ बनाई हुई थी। श्री गुरु नानक देव जी तथा उनके उत्तराधिकारियों ने जहां समय के हुकूमती जब्र के खिलाफ़ आवाज़ बुलंद की वहीं समाज में प्रचलित कुरीतियों को खत्म करने के अनेक यत्न भी किए।

निर्बल, दबी-कुचली, श्वासहीन तथा गुलामी की आदी हो चुकी भारतीय जनता में नई रूह फूंकने के लिए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा पांच ककारी पहनावे की बख्शिश की गई। लोगों की हालत यहां तक गिर चुकी थी कि वे रोटी-बेटी की रक्षा तक नहीं कर सकते थे। वैसाखी वाले दिन श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा की गई खालसे की साजना ने भारतीय समाज में नया विश्वास पैदा कर दिया, नये इंकलाब की सृजना हुई। खालसा पंथ की साजना कर गुरु जी द्वारा यह निर्देश दिया गया :

निशाने सिक्खी ईं पंज हरफ काफ। हरगिज़ ना बाशद ईं पंज मुआफ।

सिक्खी की निशानी पांच ककारी पहनावा है। जो भी सिक्ख खंडे-बाटे की पाहुल प्राप्त करता है वह इस पहनावे का पक्का धारक बनता है। ऐसे पहनावे के धारक से जनता आशा करती है कि वह जब्र-जुल्म के विरुद्ध लड़ने वाला, सदाचारी जीवन जीने वाला तथा सांसारिक लोभ से ऊपर उठा हुआ हो। जनता के इस विश्वास को बनाए रखने के लिए इस पहनावे के धारक का पवित्र धर्म-कर्त्तव्य बन जाता है कि उसका सिर चाहे चला जाए मगर वो गुरु से बेमुख न हो। इस गुरसिक्खी पहनावे को कायम रखने के लिए सिक्खों ने खुर्पी से खोपड़ी उतखाना स्वीकार कर लिया, चरखड़ियों पर चढ़

गए, तन के टुकड़े-टुकड़े करवा लिए। ऐसे गुरसिक्खों की कुर्बानियों से सिक्ख इतिहास भरा पड़ा है। पांच ककारी पहनावे के धारक बनने तथा रहित की परिपक्वता के लिए गुरमति सिद्धांतों की जानकारी तथा स्पष्टता अति आवश्यक है। वास्तव में गुरसिक्ख वाली जीवन-जाच बचपन से ही बनानी शुरू कर देनी चाहिए। इस कार्य के प्रति आरंभ से ही बच्चों को गुरमति रहित के साथ जोड़ना ज़रूरी है। इस कार्य की सफलता के लिए प्रत्येक गुरसिक्ख को व्यक्तिगत रूप से तथा प्रत्येक संस्था को संस्थागत रूप से यत्नशील होना चाहिए। सिक्ख कौम आरंभ से ही अति नाजुक दौर से गुज़रती आई है और बावजूद इसके निरंतर विकास करती रही है। हर मुश्किल के समय कौमी रंगत में निखार आया है। आने वाला समय भी सिक्खों के लिए कोई ज्यादा सुखमयी प्रतीत नहीं हो रहा। हमें अपने मन को बलवान बनाने के लिए गुरबाणी के साथ जुड़ना चाहिए। कौमी विरासत को कायम रखने के लिए प्रत्येक सिक्ख के लिए रहित में परिपक्वता लानी अति आवश्यक है।

फार्म-४, नियम-८

१. प्रकाशित करने का स्थान	:	कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
२. प्रकाशित करने का समय	:	प्रत्येक माह की सात तारीख
३. मुद्रक का नाम	:	स. मनजीत सिंघ
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
४. प्रकाशक का नाम	:	स. मनजीत सिंघ
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
५. संपादक का नाम	:	स. सतविंदर सिंघ
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	संपादक, गुरमत ज्ञान शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर
६. मालिक	:	शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर

मैं सतविंदर सिंघ घोषणा करता हूं कि उपरोक्त विवरण मेरी जानकारी के अनुसार पूर्णत: सही है।

तारीख-०७/०४/२०२२

हस्ताक्षर/-

(सतविंदर सिंघ)

संपादक, गुरमत ज्ञान।

अनुराग, त्याग एवं वैराग्य की त्रिवेणी : श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी

*-डॉ. मनजीत कौर**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के प्रारंभिक पावन स्वरूप की सम्पादना का पुनीत कार्य पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने किया। दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने तलवंडी साबो निवास के दौरान इसमें नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की बाणी को शामिल किया।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की बाणी के ५९ शबद तथा ५७ सलोक हैं, जो १५ रागों में हैं। इनमें से जैजावंती राग में केवल श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की ही बाणी है। आपकी समूची बाणी अनुराग, त्याग और वैराग्य की त्रिवेणी है। आलौकिक आंनद से भरपूर आपकी बाणी तपित हृदयों को अनुपम शांति प्रदान करती है, साथ ही गुरमति साहित्य की अनमोल धरोहर भी है। आपकी भाषा सरल, सहज मुहावरों, लोकोक्तियों से सुसज्जित है, जो सीधे हृदय में उतर कर अन्त:करण को रूपान्तरित करती है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का शब्द-चयन कमाल का है,जो उन्हें उच्च कोटि का बाणीकार सिद्ध करता है। चिन्तकों के चिन्तनानुसार भक्ति साहित्य के समस्त साहित्यकारों में श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की बाणी को बेजोड़ एवं अतुलनीय माना गया है। सलोक इतने प्रभावी हैं कि श्रोता अथवा पाठक वैराग्य-भावना से निमग्न हो जाता है; पाषाण हृदय अर्थात् अत्यधिक कठोर हृदय वाला व्यक्ति भी गुरु जी की बाणी से द्रवित हो जाता है। उनकी बाणी बहुतायत से स्वयं को सम्बोधित करते हुए उच्चारण की गई है और कहीं-कहीं साधो, हरि, भाई, प्राणी, नर आदि सम्बोधन इस्तेमाल किए गए हैं।

संत-भाषा एवं ब्रज-भाषा के करीब आपकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग विशेष रूप से हुआ है। साथ ही तद्भव शब्दों का भी अत्यधिक प्रयोग किया गया है। वैराग्य एवं त्याग की भावना होने के कारण आपकी बाणी में उपमा, रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग गहन भाव को सहज और सुगम बनाने में सक्षम है।

पौराणिक कथाओं तथा घटनाओं का संकेत आपकी बाणी में बहुतायत से किया गया है, जिससे दृष्टांत रूप से ही उसमें निहित

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३*

उपदेश सहज रूप से स्पष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार गुरु जी की बाणी कला एवं भाव-पक्ष दोनों ही रूपों में उत्कृष्ट तथा बेजोड़ है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की बाणी में बार-बार ईश्वर-नाम-सिमरन की प्रेरणा है। गुरु जी के चिन्तनानुसार ईश्वर का नाम ही है, जो भवसागर से पार उतरने में सहायक सिद्ध होता है। जीवन जीने की कला (जीवन-युक्ति) समझाते हुए गुरु जी कलयुगी जीवों को सादगीपूर्ण एवं गुणवत्ता भरपूर जीवन जीने की सीख देते हैं। उनकी बाणी में ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग बताया गया है, नेक जीवन जीने की ताकीद की गई है, ईश्वर और मृत्यु को सदैव याद रखते हुए झूठ, पाखण्ड, कपट, मोह-माया, अहंकार आदि विकारों से दूर रहने की हिदायत दी गई है। जगत की नश्वरता और झूठी प्रीति के अनेक उदाहरण प्रस्तुत कर, जीवन-मनोरथ को समझ कर सही मार्ग पर चलने का सुन्दर उपदेश दिया गया है। सत्य मार्ग के अनुगामी बन कर जीवन में न ही किसी से डरने और न ही किसी को डराने की शिक्षा देकर ईश्वरीय भय में रहने तथा अपनी ताकत का दुरुपयोग न करने का संकेत दिया गया है।

गुरु जी की बाणी अनुराग, त्याग और वैराग्य की त्रिवेणी है। कतिपय उदाहरणों द्वारा इनके गूढ़ रहस्य को समझने का यत्न करते हैं:—

अनुराग : ईश्वरीय-प्रेम में रंगा गुरु साहिब का हृदय आठों पहर ईश्वर का गुणगान करता है। गुरु जी ने समूची मानवता को प्रभु-प्यार में भीगे संदेश अपनी अमृत तुल्य बाणी द्वारा बड़े ही सहज और सरल ढंग से दिए हैं। गुरु जी समझाते हैं कि यह मानव जीवन अनमोल है। इसे विकारों में व्यर्थ मत डुबाओ। पतितों को पुनीत करने वाले, दीन-दुखियों के सच्चे साथी, शरणागत के रक्षक दयालु प्रभु को तुम क्यों भुला बैठे हो ? तुम मोह-माया, अहंकार, तृष्णा आदि का मान त्याग कर प्रभु की शरण में रहो, यही सच्चा कल्याणकारी मार्ग है। बाणी-प्रमाण है :

साधो गोबिंद के गुन गावउ ॥
मानस जनमु अमोलकु पाइओ
बिरथा काहि गवावउ ॥१ ॥रहाउ ॥
पतित पुनीत दीन बंध
हरि सरनि ताहि तुम आवउ ॥. . .
नानक कहत मुकति पंथ इहु
गुरमुखि होइ तुम पावउ ॥ (पन्ना २१९)

प्रभु-सिमरन हेतु बार-बार प्रबोधित करते हुए गुरु जी समझाते हैं कि हे भाई ! प्रभु का सिमरन किया करो, क्योंकि इंसान की जिन्दगी में वास्तव में प्रभु-नाम ने ही काम आना है। जैजावंती राग में बड़ा सुन्दर समझाया गया है :

रामु सिमरि रामु सिमरि इहै तेरै काजि है ॥
माइआ को संगु तिआगु

प्रभ जू की सरनि लागु ॥
जगत सुख मानु मिथिआ झूठो सभ साजु है ॥
(पन्ना १३५२)

अनेक दृष्टांत दिए कि अजामल तथा गनका पाप-कर्म में प्रवृत्त हुए थे और नाम जप कर भवसागर से पार उतर गए। विपदाग्रस्त हाथी ने जब ईश्वर को स्मरण किया तो उसे उसी क्षण प्रभु ने बन्धन-मुक्त कर दिया। नाम जप कर ध्रू (ध्रुव) भक्त ने अटल, अमर पद प्राप्त कर लिया। हे भाई ! ईश्वर अपने भक्तों की सदैव रक्षा करते हैं। गुरु जी समझाते हैं कि हे इंसान ! तू भी ईश्वर को सदैव अपने अंग-संग जान और उसका नाम-सिमरन कर :

दुख हरता हरि नामु पछानो ॥
अजामलु गनिका जिह सिमरत
मुकत भए जीअ जानो ॥ . . .
नानक कहत भगत रछक हरि
निकटि ताहि तुम मानो ॥ (पन्ना ८३०)

गुरु जी समझाते हैं कि हे भाई ! परमेश्वर ही तेरा सच्चा साथी है, इसलिए उसी का गुणगान कर। जीवन का यह अनमोल समय प्रभु-सिमरन के बिना व्यर्थ व्यतीत होता जा रहा है।

समस्त धन-पदार्थ मृत्यु के समय तेरे नहीं रहेंगे। हे मूर्ख प्राणी! तू जान-बूझ कर अपना काम क्यों बिगाड़ रहा है? श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी ईश्वर की शरण में आकर जीवन सफल बनाने की प्रेरणा देते हुए फरमान करते हैं :

हरि जसु रे मना गाइ लै जो संगी है तेरो ॥
अउसरु बीतिओ जातु है
कहिओ मान लै मेरो ॥१ ॥रहाउ ॥
संपति रथ धन राज सिउ
अति नेहु लगाइओ ॥ . . .
नानक कहत पुकारि कै गहु प्रभ सरनाई ॥
(पन्ना ७२७)

मन को प्रबोधित करते हुए गुरु जी मनुष्य को समझाते हैं कि तूने सांसारिक धंधों में अपना अनमोल जीवन बर्बाद कर लिया है। तुझे परमात्मा का सिमरन इस प्रकार करना चाहिए जिस प्रकार मछली जल को जीवन-आधार मानती है और जल के बिना मर जाती है। गुरु साहिब पावन सलोकों की प्रारंभता इस सलोक से करते हैं :

गुन गोबिंद गाइओ नही
जनमु अकारथ कीनु ॥
कहु नानक हरि भजु मना
जिह बिधि जल कउ मीनु ॥ (पन्ना १४२६)

गुरु जी कलयुगी जीवों का मार्गदर्शन करते हुए, सर्वकला समर्थ प्रभु का सिमरन करने की प्रेरणा देते हुए समझाते हैं कि हे भाई ! प्रभु संसार के समस्त भय दूर करने वाला तथा दुर्मति-विनाशक है। प्रभु का सिमरन दिन-रात करना चाहिए। ऐसे व्यक्ति के समस्त कार्य प्रभु स्वयं सिद्ध करता है :

भै नासन दुरमति हरन कलि मै हरि को नामु ॥

निसि दिनु जो नानक भजै सफल होहि तिह काम ॥ *(पन्ना १४२७)*

प्रभु-सिमरन करने वालों की उच्च अवस्था को बयान करते हुए गुरु जी कथन करते हैं कि यह हकीकत है कि जिसके हृदय में प्रभु का सिमरन है वह मनुष्य मुक्त ही समझो, क्योंकि हरि और हरि-जन अर्थात् ईश्वर और उसका भक्त एक रूप हो जाते हैं :

जिह घटि सिमरनु राम को
सो नरु मुकता जानु ॥
तिहि नर हरि अंतरु नही नानक साची मानु ॥
(पन्ना १४२८)

प्रभु-प्रेम में रंगा हुआ हृदय ही हर हाल में आनंद की अनुभूति करता हुआ अपना जीवन सफल करने में सक्षम होता है और यही है जीते-जी मुक्तावस्था की प्राप्ति, जो किसी विरले को नसीब होती है।

त्याग : गुरबाणी हमारा हर कदम पर मार्गदर्शन करती है कि हमें गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए कमल सदृश्य निर्लेप भाव से विचरण करना है। माया में रहते हुए भी विकारों से रहित होकर इसके दुष्प्रभाव से मुक्त रहना है। गुरु पातशाह इस संदर्भ में अपनी अमृतमयी बाणी द्वारा समझाते हैं :

साधो मन का मानु तिआगउ ॥
कामु क्रोधु संगति दुरजन की
ता ते अहिनिसि भागउ ॥ *(पन्ना २१९)*

गुरु जी समझाते हैं कि विकारों का त्याग करना, सुख-दुख में समरूप रहना, स्तुति एवं निंदा का त्याग करना अर्थात् जहां मान-सम्मान मिले वहां आपे से बाहर न होना और अगर कोई निंदा करे तो दुखी न होना अर्थात् हर तरह से निर्लेप-भाव से रहना ही जिंदगी के वास्तविक रहस्य को समझ कर हर हाल में ईश्वर की रज़ा में प्रसन्न रहना है :

सुखु दुखु दोनो सम करि जानै
अउरु मानु अपमाना ॥
हरख सोग ते रहै अतीता
तिनि जगि ततु पछाना ॥१ ॥
उसतति निंदा दोऊ तिआगै
खोजै पदु निरबाना ॥
जन नानक इहु खेलु कठनु है
किनहूं गुरमुखि जाना ॥ *(पन्ना २१९)*

अहंकार— दीर्घ रोग का वर्णन गुरबाणी में बहुतायत से हुआ है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने भी अहंकार तथा माया के मोह को त्यागने की प्रेरणा देते हुए समझाया है कि इंसान को गुरमुखों वाला कल्याणकारी मार्ग ही अपनाना चाहिए :

तजि अभिमान मोह माइआ
फुनि भजन राम चितु लावउ ॥
नानक कहत मुकति पंथ इहु
गुरमुखि होइ तुम पावउ ॥ *(पन्ना २१९)*

गुरु जी के चिन्तनानुसार जिस मनुष्य ने मैं-

मेरी (माया की पकड़), लोभ, मोह और अहंकार का अपने हृदय से त्याग कर दिया, वो व्यक्ति स्वयं तो इस संसार रूपी भवसागर से पार उतरता ही है, साथ ही अपने संगी-साथियों को भी सहजता से विकारों से मुक्त कर भवसागर से पार उतारने में सहायक सिद्ध होता है। इस संदर्भ में गुरु पातशाह का पावन फरमान है :

जो प्रानी ममता तजै लोभ मोह अहंकार॥
कहु नानक आपन तरै अउरन लेत उधार॥
(पन्ना १४२७)

इस नाशवंत शरीर का अहंकार करने वालों को गुरु जी इस शरीर की क्षणभंगुरता का एहसास करवाते हुए समझाते हैं कि वास्तव में जिस मनुष्य ने हरि की स्तुति की है, उसने ही संसार को जीत लिया है। गुरु जी का पावन उपदेश इस संदर्भ में है :

गरबु करतु है देह को बिनसै छिन मै मीत॥
जिहि प्रानी हरि जसु कहिओ
नानक तिहि जगु जीति॥ (पन्ना १४२८)

जगत की प्रीति झूठी है। सभी संबंध स्वार्थ-सिद्धि हेतु हैं। सब अपने स्वार्थ सिद्ध करने में लगे हुए हैं। अंत समय किसी ने भी साथ नहीं देना। केवल और केवल ईश्वर का नाम ही संसार रूपी भवसागर से पार उतरने के लिए रामबाण औषधि है। इस संदर्भ में गुरु पातशाह का पावन संदेश है :

जगत मै झूठी देखी प्रीति॥
अपने ही सुख सिउ सभ लागे
किआ दारा किआ मीत॥...
मन मूरख अजहू नह समझत
सिख दै हारिओ नीत॥
नानक भउजलु पारि परै
जउ गावै प्रभ के गीत॥ (पन्ना ५३६)

जिंदगी के सही मार्ग से विचलित (भटके हुए) मनुष्य का मन माया के मोह में ग्रसित रहता है, इसी कारण जो-जो कर्म वह माया के, लालच के अधीन करता है, वही उसके जीवन का जंजाल बन जाते हैं अथवा गले का फंदा बन जाते हैं :

भूलिओ मनु माइआ उरझाइओ॥
जो जो करम कीओ लालच लगि
तिह तिह आपु बंधाइओ॥ (पन्ना ७०२)

ईश्वर के सिमरन के बिना बेशकीमती जीवन व्यर्थ खचित हो जाता है। गुरु जी ने कलयुगी जीवों को त्यागयोग्य कृत्यों का त्याग कर ग्रहणीय नेक कर्मों की ओर प्रवृत्त होकर इस दुर्लभ मानव जीवन को सफल करने का सुंदर पावन संदेश दिया है।

वैराग्य : चिन्तकों के चिन्तनानुसार वैराग्य का सामान्य अर्थ है— सांसारिक पदार्थों एवं तृष्णा का परित्याग। इहलोक और परलोक के फल-भागों की ओर से जो विरक्ति हो जाती है, उसी का नाम वैराग्य है। वास्तव में यह

वैराग्य कर्मों अथवा गृहस्थ धर्म से पलायन न होकर धर्म-आचरण में समाहित है, अत: संसार, समाज, परिवार में रहते हुए निर्लिप्त भाव से समस्त कर्त्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए।

सिक्ख धर्म में वैराग्य का महत्व प्रारम्भ से ही परिलाक्षित होता है, जहां निष्काम कर्मयोग ही वैराग्य मार्ग है। तपस्या एवं साधनामय जीवन के लिए वन में जाकर ईश्वर को खोजने की आवश्यकता नहीं, अपितु हृदय-घर में ही ईश्वर से साक्षात्कार करना है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी हमारा इस संदर्भ में दिशा-निर्देश करती है :

काहे रे बन खोजन जाई ॥
सरब निवासी सदा अलेपा
तोही संगि समाई ॥१ ॥ रहाउ ॥
पुहप मधि जिउ बासु बसतु है
मुकर माहि जैसे छाई ॥
तैसे ही हरि बसे निरंतरि
घट ही खोजहु भाई ॥१ ॥
बाहरि भीतरि एको जानहु
इहु गुर गिआनु बताई ॥
जन नानक बिनु आपा
चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥ (पन्ना ६८४)

कितने सुंदर दृष्टांत से ईश्वर की सर्वव्यापकता का बोध गुरु जी ने करवाया है कि जैसे फूल में सुगंधि छिपी है, जैसे दर्पण में अपना अक्स दिखाई देता है, उसी प्रकार ईश्वर हमारे हृदय-घर में ही विराजमान है। उसे खोजने के लिए अपने स्वरूप को खोजने की आवश्यकता है, न कि वन में भटकने की।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने मायामय जगत की क्षणभंगुरता एवं नश्वरता की तुलना पानी के बुलबुले, बालू की भीत (दीवार), धुएं के पहाड़, स्वप्न आदि से करते हुए मृगतृष्णा के भ्रम-जाल से निकल कर सदैव कायम रहने वाले प्रभु की भक्ति हेतु प्रेरित किया है। गुरु जी ने स्पष्ट हिदायत की है कि जिसकी रचना हुई है उसने विनिष्ट होना ही है अर्थात् जिसने जन्म लिया है उसने काल-ग्रस्त होना ही है। समस्त सांसारिक जंजालों को छोड़ कर हरि के गुण गायन करने चाहिए :

जो उपजिओ सो बिनसि है
परो आजु कै कालि ॥
नानक हरि गुन गाइ ले छाडि सगल जंजाल ॥
(पन्ना १४२९)

यहां संसार में सदैव रहने के लिए कोई नहीं आया। बड़े-बड़े राजा, धनवान तथा बड़े परिवार वाले इस धरा पर आए और चले गए, क्योंकि यह जगत-रचना स्वप्न सदृश्य मिथ्या है :

रामु गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवारु ॥
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारु ॥
(पन्ना १४२९)

संसार की नश्वरता की ओर संकेत करते

हुए, बुलबुले से उसकी तुलना करते हुए गुरु साहिब समझाते हैं कि जैसे पानी में बुलबुला बनता है और फिर उसी में विनिष्ट हो जाता है वैसे ही इस जगत की रचना है :

जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत ॥
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुनि मीत ॥

(पन्ना १४२७)

गुरु जी समझाते हैं कि हे भाई! धन-दौलत, स्त्री, संपत्ति आदि को अपनी मत मान और अपने मन में यह निश्चित कर ले कि अंत समय इनमें से कोई भी तेरे साथ जाने वाला नहीं है :

धनु दारा संपति सगल जिनि अपुनी करि मानि ॥
इन मै कछु संगी नही नानक साची जानि ॥

(पन्ना १४२६)

मन को प्रबोधित करते हुए गुरु जी का कथन है कि हे मन! तूने कैसी खोटी गति ग्रहण कर ली है ? तू हर समय पराई स्त्री तथा निंदा-कर्म में प्रवृत्त रहता है और कभी ईश्वर का सिमरन नहीं करता। दुनियावी पदार्थों के संग्रह में ग्रस्त रहते हुए कदाचित विचार ही नहीं करता कि अंत काल में तेरे साथ ये सब नहीं जायेंगे। उच्च भाग्य से मिला यह दुर्लभ मानव जीवन गुरु-दर्शाये मार्ग पर चल कर सफल कर ले :

मन रे कउनु कुमति तै लीनी ॥
पर दारा निंदिआ रस रचिओ
राम भगति नहि कीनी ॥...
बहुतु जनम भरमत तै हारिओ
असथिर मति नही पाई ॥
मानस देह पाइ पद हरि भजु नानक बात बताई ॥

(पन्ना ६३१)

जिसे हर अवस्था में समरूप रहना आ गया और जिस मनुष्य ने ईश्वर का पावन नाम अपने हृदय में बसा लिया, उसके समस्त दुखों-कष्टों का समूल निवारण हो जाता है। उसे प्रभु के दीदार हो जाते हैं अर्थात् उसे सर्वत्र विराजमान प्रभु के प्रत्यक्ष दर्शन हो जाते हैं :

राम नामु उर मै गहिओ जा कै सम नही कोइ ॥
जिह सिमरत संकट मिटै दरसु तुहारो होइ ॥

(पन्ना १४२९)

निष्कर्षत: महान तपस्वी, त्यागी, अनुरागी श्री गुरु तेग बहादर साहिब, जिन्होंने मानवीय मूल्यों एवं समूची मानवता की धार्मिक स्वतंत्रता हेतु अद्वितीय बलिदान दिया, उनकी पावन अमृत तुल्य बाणी अनुराग, त्याग और वैराग्य की त्रिवेणी है, जिसे पढ़-सुन कर जीते-जी मुक्तावस्था प्राप्त हो सकती है।

'आपे गुरु चेला' के संकल्प की महानता

-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'

खालसा पंथ की साजना और 'आपे गुरु चेला' का संकल्प दोनों एकरूप हैं। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने १ वैसाख, संवत् १७५६ तद्नुसार १६९९ ई. को श्री अनंदपुर साहिब में सिक्खों का एक विशाल दीवान खास सजाया गया। सिक्खों को हुकमनामे भेजकर बुलाया गया। वैसाखी वाले दिन दीवान खास करने का स्वभाव श्री गुरु अमरदास जी के समय ही शुरू हो गया था।

यह अपनी किस्म का पहला दीवान खास था, जो गुरु जी ने बुलाया था। एक विशेष बात, इससे पहले भी दीवान खास होते थे, परंतु विशेष मंतव्य हेतु बुलाया गया यह प्रथम दीवान खास था।

श्री अनंदपुर साहिब में एक विशाल दीवान खास सजाया गया। मंच की बगल में एक छोटा-सा तंबू लगाया गया। शबद-कीर्तन के बाद गुरु जी ने अपनी कृपाण म्यान में से बाहर निकाली तथा गर्ज कर कहा— ''कोई है ऐसा, जो धर्म व कौम के लिए जान कुर्बान करने को तैयार हो ?''

यह सुनते ही चारों ओर सन्नाटा छा गया। कुछ देर बाद लाहौर से आये भाई दया राम उठे। उन्होंने स्वयं को पेश किया। गुरु जी उन्हें तंबू में ले गए। खून से सनी कृपाण लेकर बाहर आए गुरु जी ने एक और शीश की मांग की। दूसरी बार दिल्ली के रहने वाले भाई धरम दास ने खुद को अर्पित किया। इसी प्रकार तीन अन्य गुरसिक्खों ने एक के बाद एक अपने आप को कुर्बानी के लिए प्रस्तुत किया। तीसरी बार द्वारिका के भाई मोहकम चंद, चौथी बार बिदर शहर के निवासी भाई साहिब चंद और पांचवी बार द्वारिका के भाई हिंमत राय ने अपने आप को पेश किया। गुरु जी द्वारा ली गई इस अद्भुत व अद्वितीय परीक्षा के बारे में कुछ भी कहना असंभव है। इस परीक्षा में उत्तीर्ण होकर 'पांच प्यारों' ने इतिहास के पृष्ठों पर अपने नाम दर्ज करवा लिए तथा अपना जीवन सफल कर गए।

गुरु जी ने उन्हें सुंदर पोशाक पहनाई और उपस्थित संगत के समक्ष ले आए। संगत के सामने ही दिव्य व अद्वितीय अमृत तैयार किया गया तथा साजे-निवाजे पांच प्यारों को छकाकर सिंघ के स्वरूप में आलौकिकता एवं

**बी-एक्स-९२५, संतोखपुरा, हुशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४; फोन : ९८७२२-५४९९०*

अद्वितीयता प्रदान की। उनके नाम के साथ 'सिंघ' शब्द लगाया गया। कलगीधर पिता जी ने फरमाया कि अब तुम्हारी कोई जाति, वर्ण नहीं और आप सभी 'अनंदपुर' के निवासी हो :

अब ते कहहु अनंदपुर वासी।
पंचहु नाम धरे गुनरासी।'

पांच प्यारों को अमृत-पान कराने के बाद गुरु जी ने स्वयं उनसे अमृत छकने की याचना की। कैसा विलक्षण व शानदार इतिहास रचा जा रहा था! विश्व के इतिहास में एक क्रांतिकारी कदम उठाया गया था। पांच प्यारों ने अपने गुरु, अपने रहबर को अपने हाथों से अमृत छकाया। यह महान् दृश्य समय के पटल पर हमेशा के लिए अंकित हो गया। इस क्रांतिकारी घटना को देखकर भाई गुरदास जी (द्वितीय) ने लिखा है :

वह प्रगटिओ मरद अगंमड़ा वरीआम इकेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला॥
(वार ४१:१७)

उस दिन असंख्य लोगों ने अमृत-पान किया और गुरु जी द्वारा दिए गए आदेशों पर दृढ़ रहने का प्रण किया।

इस संदर्भ में 'आपे गुरु चेला' के संकल्प की विलक्षणता और महानता दुष्टिगोचर होती है। समाज में मौजूद तथाकथित गुरु, साधु, संत, पीर, मुल्ला, काजी आदि साधारण लोगों से एक फासला बनाकर रखते थे। वे स्वयं को परमात्मा के असली दूत होने का ढोंग रचा करते थे। उनका आम लोगों के दु:खों-कष्टों से कोई सरोकार नहीं रहता था। वे धार्मिक अनुष्ठानों बनाम आडंबरों द्वारा उनके कष्ट व दुख दूर करने का नाटक किया करते थे और उनसे धन, वस्त्र, अनाज तथा अन्य वस्तुएं बटोर लेते थे। पूजा-पाठ के नाम पर ठगी का धंधा चला रहे थे और स्वयं को बहुत श्रेष्ठ, उत्तम, ऊंचे इंसान के रूप में पेश किया करते थे। गुरु जी ने 'आपे गुरु चेला' का महान व महत्वपूर्ण सिद्धांत पेश कर दिया कि गुरु और शिष्य में कोई भेद नहीं होना चाहिए। गुरु और शिष्य को अलग-अलग तौर पर नहीं समझना चाहिए। दोनों की हस्ती एक होती है। दोनों में कोई आपसी दूरी नहीं होनी चाहिए।

इतिहासकार गोकुल चंद नारंग लिखते हैं— ''जात-पांत खत्म कर सभी को एक समान अधिकार देकर, एक ही पूजा-स्थान, एक ही यात्रा (उद्देश्य)-स्थान, एक ही बाटे में से सभी को अमृत छकाकर और सभी को एक जैसी रहित मर्यादा देकर तथा इससे भी बढ़कर एक झंडे तले, एक नायक की आगवानी का आदर्श देकर सिक्खों में न टूटने वाली एकता पैदा की और उन्हें एक लड़ी में पिरो दिया।''

'आपे गुरु चेला' का संकल्प बहुत श्रेष्ठ संकल्प है। इस संकल्प में दृढ़ता और श्रेष्ठता कूट-कूटकर भरी है। सच्चे गुरु के शिष्य स्वयं

को अपने गुरु, इष्ट से अलग या दूर नहीं समझते। वे सदैव गुरु को अपने अंग-संग समझते हैं। उनके एक हुक्म पर अपना सर्वस्व कुर्बान करने को तैयार हो जाते हैं। 'आपे गुरु चेला' का सिद्धांत द्वैतवाद पर कुठाराघात करता है और अद्वैतवाद की भावना पैदा करता है, स्वयं की श्रेष्ठता व उच्चता के अहं से मुक्ति दिलाता है, गुरु और उसके शिष्यों की आपसी निकटता, प्रेम, सौहार्द्र का पवित्र संगम पैदा करता है।

प्रसिद्ध सिक्ख विद्वान और चिंतक प्रिंसिपल सतिबीर सिंघ (दिवंगत) एक स्थान पर लिखते हैं— ''गुरु जी ने सिक्खों में से व्यक्तिगत भाव खत्म कर दूसरों के लिए मरने का चाव पैदा किया। निराशावादी पुरुष को गुरु जी ने खुश-तबीयत, आशावादी एवं हिम्मत वाला पुरुष बना दिया। सिक्ख में ऐसा गुण भर दिया कि वह बेशक मिट जाए, परंतु झुकेगा नहीं। वह जुल्म की उठती लहर के आगे चट्टान बनकर खड़ा हो जाएगा, बंद-बंद (अंग-अंग) कटवा लेगा, किंतु अपने आदर्श से कभी नहीं गिरेगा।''

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने लोक-कल्याण, धर्म, सच्चाई, न्याय की रक्षा हेतु खालसा पंथ की साजना की, निजी हित-पूर्ति के लिए कतई नहीं। सिक्खों को आचरण की शुचता एवं धर्म की उच्चता सदैव कायम रखने का उपदेश व आदेश दिया। सिक्खों को पांच ककार धारण करने का हुक्म दिया। अमृत तैयार करते समय पांच बाणियों का पाठ करने का भी आदेश दिया। सिक्खों को हर समय वाहिगुरु का जाप करने हेतु प्रेरित किया और विरोधियों के साथ युद्ध करने का कौशल सिखाया। युद्ध करते वक्त धैर्य न छोड़ने के लिए कहा। इस तरह कायरता के भाव को दूर भगाने का अद्‌भुत ढंग सिखलाया। उस पुरुष को धन्य कहा, जो युद्ध करते समय भी वाहिगुरु को स्मरण करता है :

धंनि जीओ तिह को जग मै,
मुख ते हरि, चित्त मै जुधु बिचारै॥
देह अनित ना नित्त रहै,
जसु-नाव चढ़ै भव सागर तारै॥
धीरज-धाम बनाइ इहै तन,
बुद्धि सु दीपक जिउं उजीआरै॥
गिआनहि की बढनी मनहू हाथ लै,
कातरता कुतवार बुहारै॥

(दसम ग्रंथ)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मानव जीवन-युक्ति

- प्रिं. लाभ सिंघ (दिवंगत)

जीवन-युक्ति की बात याद आते ही ध्यान कई प्रकार की जीवन-युक्तियों की तरफ जाता है। मनोविज्ञान एक अन्य तरह की जीवन-युक्ति की बात कर रहा है और शरीर-विज्ञान किसी अन्य तरह की। समाज-शास्त्र किसी अन्य तरह की जीवन-युक्ति बता रहा है और अर्थ-शास्त्र किसी अन्य प्रकार की। यहाँ स्वाभाविक रूप से मन में यह सवाल उठता है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्शायी जीवन-युक्ति की बाकियों से क्या भिन्नता और क्या विशेषता है? उपरोक्त जीवन-युक्तियों से उसका क्या रिश्ता है? क्या इन जीवन-युक्तियों में किसी प्रकार के वर्ग-विभाजन की संभावना है? वर्ग-विभाजन के सवाल को हम 'हाँ' में स्वीकार करते हुए एक काम-चलाऊ वर्ग-विभाजन कर सकते हैं। यहाँ शब्द 'काम-चलाऊ' की तरफ ध्यान देने की ज़रूरत है, क्योंकि यह विभाजन अंतिम रूप से संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। हम निम्नलिखित किए गए विभाजन में एक वर्ग के दूसरे वर्ग में आंशिक तत्वों के अस्तित्व से सचेत हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्शायी गई मानव जीवन-युक्ति को हम धार्मिक जीवन-युक्ति कह सकते हैं और शेष उक्त उक्त वर्णित जीवन-युक्तियों को हम धर्म-निरपेक्ष जीवन-युक्तियों के दायरे में रख सकते हैं। दोनों प्रकार की जीवन-युक्तियों की आपसी भिन्नताओं और रिश्ते को भी समझा जा सकता है। धार्मिक जीवन-युक्ति को हम पूर्ण वृत्ति वाली जीवन-युक्ति कह सकते हैं और धर्म-निरपेक्ष को खंडित वृत्ति वाली। धर्म, जीवन का अंतिम संबंध (Ultimate Concern) होने के कारण जीवन की समग्रता (Totality) के साथ जुड़ा हुआ है, परंतु उक्त वर्णित विज्ञान, जीवन के किसी एक पक्ष के साथ जुड़े होते हैं। इसका प्रभाव यह होता है कि ऐसे विज्ञानों पर आधारित जीवन-युक्ति मानव जीवन के किसी एक पक्ष का नेतृत्व करने के योग्य ही होती है, जबकि धार्मिक जीवन-युक्ति समूचे जीवन को ही दिशा प्रदान करती है। यहाँ इन जीवन-युक्तियों का परस्पर रिश्ता भी स्पष्ट होता है। धार्मिक जीवन-युक्ति समग्रता से सम्बन्धित होने के कारण सभी दूसरी जीवन-युक्तियों को भी अपनी पूर्ण वृत्ति वाली दृष्टि के आधार पर अपने परिरंभण में लेती है। धर्म-

निरपेक्ष विज्ञान भी आंशिक जीवन-युक्ति निर्धारित करते हुए समग्रता को आंशिक रूप से स्वीकार करते हैं। इनके आपसी जटिल रिश्ते के कारण ही हमने अपने उपरोक्त वर्ग-विभाजन को 'काम-चलाऊ' कहा था।

ख़ैर, उपरोक्त विस्तार यहाँ हमारी केंद्रीय समस्या के साथ स्पष्ट रूप से सम्बन्धित नहीं। इसे शामिल करने का हमारा आशय आधुनिक आशंकाओं से भरपूर मन को अपनी केंद्रीय समस्या की तरफ अपने साथ ले जाने से अधिक कुछ नहीं, इसलिए अब हम वास्तविक समस्या की तरफ लौटते हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अनुसार जीवन-युक्ति बाणी में निश्चित आदर्श-सिद्धि के लिए प्रवानित जीवन-व्यवहार है। धार्मिक जीवन-युक्ति के बारे में इससे पहले संकेत कर आए हैं कि यह खंडारथ दृष्टि (View) को नहीं, बल्कि सरबारथ दृष्टि (Vision) को अपना आधार बनाती है, जिसका संबंध जीवन के किसी एक पक्ष के साथ नहीं, बल्कि सामूहिक जीवन के साथ है। इसी कारण श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मानव के किसी एक पक्ष का नेतृत्व नहीं, बल्कि समूचे जीवन का नेतृत्व है। यहाँ समस्या मानव के आर्थिक पहलू या मनोवैज्ञानिक पहलू की नहीं, बल्कि मानव-अस्तित्व की होती है और यहाँ आदर्श में सुझाया हल भी जीवन के किसी एक पक्ष के लिए नहीं, बल्कि समग्रता से मानवीय अस्तित्व की समस्याओं के लिए है।

खंडारथ दृष्टि, लोक-परलोक की बुनियादी भिन्नता को आधार मान कर चलती है, मगर सरबारथ दृष्टि ऐसी पृथकता नहीं करती। पहली दृष्टि के अनुसार जीवन दो बिंदुयों को मिलाने वाली सरल रेखा के समान अनुमानित किया जाता है, जिसके आदि-अंत के बारे में मौन धारण किया जाता है और दूसरी दृष्टि के अनुसार जीवन को एक चक्कर के रूप में अनुमानित किया जाता है। यहाँ जन्म और मृत्यु के बिंदु जीवन का आदि-अंत नहीं माने जाते। जीवन ऐसे बिंदुयों और रूप-परिवर्तन को अपना कर अपने वेग में बहता रहता है। गुरबाणी का आदर्श मानव का नेतृत्व लोक-परलोक में करता है, केवल इस लोक में ही नहीं। गुरबाणी के अनुसार मानवीय अस्तित्व के दुख का बुनियादी कारण उसका अपने जीवन-केंद्र से अलग होना है। मानव अपने आप में प्रभु का अंश अवश्य है, लेकिन पूर्ण बिलकुल नहीं। यह पूर्णता आ सकती है मानव के पुन: अपने जीवन-केंद्र (परमात्मा) के साथ जुड़ने से। मानव का अपने जीवन-केंद्र से टूटना ही उसके जीवन के अस्तित्व के सभी दुखों का आरंभ है। यहाँ परमात्मा से हुए वियोग के कारण जीव चौरासी लाख योनियों के दुखदायक चक्कर में पड़ जाता है और उसके दुख उसे तब तक नहीं छोड़ते, जब तक वह अपने केंद्र के साथ पुन: नहीं जुड़ जाता,

परमात्मा के साथ मिलाप नहीं कर लेता। यह मिलाप प्राप्त करना या पुन: केंद्र के साथ जुड़ना ही मानव जीवन का आदर्श और मानव जीवन के अस्तित्व के सभी दुखों का अंत स्वीकार किया गया है। इसी अवस्था पर पहुँचे व्यक्ति को ही गुरु साहिबान ने 'सचिआर', 'गिआनी', 'संत' और 'सुहागण' आदि के नाम दिए हैं। सचिआर (सत्यनिष्ठ) पद की प्राप्ति करना ही मानव जीवन का ध्येय है और इस प्राप्ति की चेष्टा ही वास्तविक जीवन-युक्ति है :

प्राणी तूं आइआ लाहा लैणि ॥
लगा कितु कुफकड़े सभ मुकदी चली रैणि ॥
(पन्ना ४३)

यह लाभ प्राप्त किया जा सकता है केवल मानव जीवन में ही। आवागमन के चक्कर में मनुष्य जीवन की प्राप्ति ही वो अवसर है, जब उसकी संभावनाएं साकार होने की आशा होती है और वह चेतन तौर पर अपने जीवन की तरफ मुड़ सकता है। इस अवसर को भी जिसने खो दिया, उसके लिए जीवन के दुखमयी चक्कर में से निकनले की अन्य कोई आशा नहीं होती:

लख चउरासीह जोनि सबाई ॥
माणस कउ प्रभि दीई वडिआई ॥
इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै
सो आइ जाइ दुखु पाइदा ॥ (पन्ना १०७५)

इस आदर्श के बिना किसी अन्य जीवन-आदर्श को गुरु साहिब स्वीकार नहीं करते। उनके लिए जीवन का वास्तविक 'धन' मायामयी जीवन के रस-भोग के लिए सामग्री इकट्ठी करना नहीं। ऐसी सामग्री भ्रष्ट हो जाने वाली और नाशवान होती है। इन भोगों से उत्पन्न सुखों की कोख में दुख पलते हैं। इन्ही कारणों से गुरु साहिबान ने मानव को ऐसे अवगुणों से सचेत करते हुए जीवन में आदर्श गुण धारण करने की प्रेरणा दी है :

— राजु मालु जंजालु काजि न कितै गनु ॥
हरि कीरतनु आधारु निहचलु एहु धनु ॥
(पन्ना ३९८)
— जेते रस सरीर के तेते लगहि दुख ॥
(पन्ना १२८७)
— मंदर मिटी संदड़े पथर कीते रासि जीउ ॥
हउ एनी टोली भुलीअसु
तिसु कंत न बैठी पासि जीउ ॥ (पन्ना ७६२)
— निमख काम सुआद कारणि
कोटि दिनस दुखु पावहि ॥
घरी मुहत रंग माणहि फिरि
बहुरि बहुरि पछुतावहि ॥ (पन्ना ४०३)
— एको निहचल नाम धनु
होरु धनु आवै जाइ ॥ (पन्ना ५११)

ऐसे निश्चल नाम-धन की प्राप्ति के लिए पहला प्रयत्न यह है कि मानव अपनी वास्तविकता को पहचाने कि मैं क्या हूं। मेरी वास्तविकता क्या है ? उसके साथ मेरा क्या रिश्ता है ? मैं उसके साथ कैसे एकात्मकता

प्राप्त कर सकता हूं ? इन प्रश्नों के हल में ही मानव जीवन-युक्ति के बीज छिपे रहते हैं। मैं अकाल पुरख की अंश हूं। मैंने अहं के कारण अपने आप को जीवन-केंद्र मान लिया, नहीं तो उसके मुकाबले पर जिसका मैं अंश हूं, मेरी कोई अन्य वास्तविकता नहीं। मेरी वास्तविकता वही है। मैं उससे बिछड़ा हुआ हूं। यह बिछड़ना मेरे सभी दुखों का कारण है। मैं उसके साथ मिल सकता हूं , उसके साथ एकात्मकता प्राप्त कर सकता हूं , उसे अपनी जीवन-दिशा और कार्य-प्रेरणा बना सकता हूं। गुरु साहिब ने मुझे अपने केंद्र के साथ मिलने की युक्ति भी बतायी है। वो युक्ति है— प्रेमा-भक्ति या भाव-भक्ति :

— भाउ भगति करि नीचु सदाए॥
तउ नानक मोखंतरु पाए॥ (पन्ना ४७०)
— कहु कबीर जन भए खालसे
प्रेम भगति जिह जानी॥ (पन्ना ६५५)

यह प्रभु-प्रेम का मार्ग कोई आसान मार्ग नहीं है। दूसरे भाव में फंसे वे जीव, जिनमें प्रभु-प्रेम की पीड़ा परिपक्व नहीं होती, झड़ जाते हैं :

रते सेई जि मुखु न मोड़ंन्हि
जिन्ही सिञाता साई॥
झड़ि झड़ि पवदे कचे बिरही
जिन्हा कारि न आई॥ (पन्ना १४२५)

परंतु कुछ विरले जन इस सीढ़ी पर जा चढ़ते हैं। उन्होंने दूसरे भाव को दूर रखा होता है। प्रभु-प्रीति की रक्षा के लिए उन्होंने यौवन चले जाने की भी परवाह नहीं की होती। ऐसे व्यक्ति अपनी जीवन-युक्ति को पूर्णता पर पहुँचा देते हैं। उनकी प्रीति पक्की हो जाती है। वे अपने इस आदर्श के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी भी सहर्ष कर जाते हैं :

— मू लालन सिउ प्रीति बनी॥ रहाउ॥
तोरी न तूटै छोरी न छूटै
ऐसी माधो खिंच तनी॥ (पन्ना ८२७)
— जउ तनु चीरहि अंगु न मोरउ॥
पिंडु परै तउ प्रीति न तोरउ॥ (पन्ना ४८४)

प्रभु-प्रीति को इस अवस्था पर ले जाना ही आदर्श के ताले को खोलने की युक्ति है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इस भाव-भक्ति की पूर्णता के लिए बहुत-से सहायक साधनों का जिक्र आया है। अपने आदर्श की मंज़िल पर पहुँचने के लिए साधक इन सहायक साधनों की मदद लेता है। यह उन सभी सहायक साधनों के विस्तार में जाकर हमारी समय-स्थान की पाबंदियों के पाबंद नहीं रह सकते। उन साधनों के नाम गिना देना ही पर्याप्त होगा। इन सहायक साधनों को निश्चयात्मक (Positive)और निषेधात्मक (Negative) दो वर्गों के अधीन गिनाया जा सकता है। निश्चय आत्मिक साधनों में से सबसे आवश्यक है— नाम जपना या सिमरन करना। सिमरन करना, नाम जपना साधन पक्ष से वाहिगुरु के गुणों का जाप और ध्यान है, उसकी लगातार याद है।

सिमरन के साथ ही इस कठिन मार्ग पर गुरु के नेतृत्व की ज़रूरत होती है। साधसंगत करना, कीर्तन द्वारा उसे रिझाना, उसके समक्ष अरदास करना आदि कुछ और ज़रूरी साधन हैं। इसके साथ ही सदाचारक गुणों को धारण करने पर भी बहुत बल मिलता है।

निषेधात्मक साधनों में से अहं का त्याग, रस-भोगों का संयम, संसार की नश्वरता, अल्प सामयिकता को जानना आदि आते हैं। उपरोक्त साधनों की मदद से किया अमल, मानव को सुहागिन या सचिआर पद पर पहुँचाने के योग्य है। मानव अपने अहंपूर्ण स्व को पहचान कर जीवन-केंद्र परमात्मा के साथ जुड़ सकता है।

उपरोक्त जीवन-युक्ति मानव-अस्तित्व के आत्म-समाज तथा परमात्मा के त्रैमुखी प्रसार में से और परमात्मा के संबंधों के साथ जुड़ी है। यहाँ समस्या मानव-अस्तित्व के सामाजिक प्रसार की आती है। क्या श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में मानव-अस्तित्व के सामाजिक प्रसार को आँखों से ओझल किया गया है ? क्या श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्ज मानव जीवन-युक्ति मानव जीवन के सामाजिक प्रसार के प्रति मौन धारण करती है ? इन प्रश्नों का उत्तर न में दिया जा सकता है। धार्मिक जीवन-युक्ति किसी एक पक्ष को नहीं, समूचे जीवन को अपने परिरंभण में लेती है और जीवन की समग्रता में से इसके अति महत्वपूर्ण सामाजिक प्रसार को आँखों से ओझल नहीं किया जाता। धार्मिक आदर्श अपने स्वभाव के अनुसार व्यवहारिक सामाजिक जीवन को प्रभावित करता है और उसे यह विशेष दिशा प्रदान करता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में वर्णित जीवन-युक्ति भी इस प्रसार के महत्व से इनकारी नहीं, बल्कि पूर्णत: सचेत है। यदि यह कह लिया जाये कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की जीवन-युक्ति का क्रांतिकारी पक्ष ही सामाजिक व्यवहार के स्तर पर प्रकट हुआ है तो गलती नहीं होगी। यह सिक्खी सिद्धांत नहीं, सिक्खी अमल ही था, जिसने सिक्ख धर्म का विश्वव्यापक स्तर पर परिचय करवाया। बाहरी संसार को इनके बारे में जानने की चाह इनके सामाजिक व्यवहार के स्तर पर विशेष रूप-रेखा देने के लिए ही थी कि गुरु-ज्योति ने यहाँ दस जामे (जन्म, शरीर) ग्रहण किये और धर्म को तभी संस्थाई रूप दिया (ख़ालसे की साजना की) जब यह यकीन हो गया कि इस पंथ की जीवन-युक्ति में सामाजिक अमल के स्तर पर परिपक्वता आ गई है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में निर्धारित जीवन-युक्ति प्रतिष्ठा (पति) को अपनी प्ररिपक्वता का मापदंड (Standard) बनाती है। वही जीवन-युक्ति स्वीकृत है, जो मानव को प्रतिष्ठा भरा जीवन प्रदान करती है। यदि जीवन प्रतिष्ठा वाला नहीं बन सका तो दोष

जीवन-युक्ति में है :

— जे जीवै पति लथी जाइ ॥
सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ (पन्ना १४२)
— नानक गुर बिनु नाहि
पति पति विणु पारि न पाइ ॥ (पन्ना १३८)
— जितु बोलिऐ पति पाईऐ
सो बोलिआ परवाणु ॥ (पन्ना १५)
— जा पति लेखै ना पवै सभा पूज खुआरु ॥
(पन्ना १७)
— साची दरगह बैसई भगति सची अरदासि ॥
पति सिउ लेखा निबड़ै राम नामु परगासि ॥
(पन्ना ५५)
— पति सेती जावै सहजि समावै
सगले दूख मिटावै ॥
कहु नानक प्राणी गुरमुखि छूटै
साचे ते पति पावै ॥ (पन्ना ७६)

गुरबाणी में जीवन की सफलता का, प्रतिष्ठा का मापदंड एक विशेष तरह की जीवन-युक्ति की सृजना का आधार बनता है। सामाजिक जीवन नेकी-बदी का अखाड़ा है। बदी के भय से इस अखाड़े में से अपने आप को हटा लेना भी प्रतिष्ठा भरा जीवन नहीं, पराजय है, हार है। प्रतिष्ठा भरा जीवन तो बदी के साथ जूझने में है, अखाड़े में रहते हुए जूझ मरने में है। शायद इसी कारण गुरु साहिब इस समाज से पराजय या नैतिक उदासीनता को स्वीकार नहीं करते, बल्कि समाज में सक्रिय शमूलियत (Active Participation) के जीवन का प्रचार करते हैं। गुरु साहिब योगियों की उस जीवन-विधि, जिसके अनुसार वे समाज से बाहर रहते हैं, लेकिन माँग कर खाने के लिए वे फिर समाज में रह रहे लोगों की तरफ देखते हैं, को अपमान भरा जीवन कहते हैं। बाबा शेख फ़रीद जी तो पराए दर पर बैठने की बजाय मृत्यु को प्राथमिकता देते हैं :

फरीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझै न देहि ॥
जे तू एवै रखसी जीउ सरीरहु लेहि ॥
(पन्ना १३८०)

गुरु साहिब डगमगाते मन को रोकने की ऐसी युक्ति बताते हैं, जिसमें इसका हल सामाजिक अमल के स्तर पर रहते ही हो सकता है। वो युक्ति है— सत्य पर आधारित श्रम (किरत) :

इह मनु डोलत तउ ठहरावै ॥
सचु करणी करि कार कमावै ॥ (पन्ना १३४४)

सच्चे श्रम का आधार काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि मानवीय जीवन के विकार नहीं, बल्कि सत्, संतोष, दया आदि नैतिक गुण ही हो सकते हैं :

सतु संतोखु दइआ कमावै एह करणी सार ॥
(पन्ना ५१)

ऐसी निर्मल कमाई पारब्रह्म के साथ लगी प्रीति का फल भी है और बाणी में निर्धारित जीवन-युक्ति का महत्वपूर्ण अंग भी :

— पारब्रहम सिउ लागी प्रीति ॥
निरमल करणी साची रीति ॥ (पन्ना १८४)

— सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥
हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥
(पन्ना २६६)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्ज मानव जीवन-युक्ति निर्मल श्रम के प्रति यहीं पर खामोश नहीं होती, इससे भी आगे जाती है। मानव की मानवता इसमें नहीं कि उसे जो प्राप्त हो जाये, पशु की तरह खुद ही हड़प कर जाये। पशु स्तर पर विचरण करने वाला स्वार्थी जीवन अपमान भरा जीवन है। प्रतिष्ठा तो इसमें है कि खुद कमाई कर दूसरों को भी दे :

— फिटु इवेहा जीविआ
जितु खाइ वधाइआ पेटु ॥ (पन्ना ७९०)
— घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)

निर्मल श्रम कर, उसमें से देने में दया व संतोष का प्रभाव है, लोभ व मोह का निषेध है। बाँट कर छकने की भावना मानव जीवन को प्यार के सूत्र में बांधती है, एकता का स्थायी आधार बनती है। यह मानव के दुरुपयोग की विरोधी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आध्यात्मिक आदर्श की आड़ में बाणी में एक बड़े ऊँचे और शुद्ध सदाचारक विधान का सृजन हुआ है, जो व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन को क्रियात्मक और सृजनात्मक दिशा प्रदान करने के योग्य है। गुरु साहिबान इस बात का दावे के साथ एलान करते हैं कि ऐसा आचार अन्य प्रकार के धर्मों-कर्मों आदि से उत्तम है :

करम धरम अनेक किरिआ
सभ ऊपरि नामु अचारु ॥ (पन्ना ४०५)

सिक्ख इतिहास का रंग-रूप ही अलग है। सिक्खों को प्रतिष्ठित जीवन जीने के लिए बहुत-लंबा समय कई प्रकार के मोर्चे लगाने पड़े हैं। जहाँ कहीं भी इन पर संकट-काल आया, इन्होंने अपमान और प्रतिष्ठा में से प्रतिष्ठा को चुना, चाहे इसके बदले में इन्हें कितना ही भारी मूल्य ही चुकाना पड़ा। ऐसी जीवन-युक्ति की रक्षा के लिए सिक्खों के गुरु साहिबान शहीद हुए, गुरु पातशाह के मासूम साहिबज़ादों को दीवार में चिनवाया गया, घर-बार से उजड़ना स्वीकार किया, भूखे रहना स्वीकार किया और ज़रूरत पड़ने पर अनगिनत जानें भी कुर्बान कीं, परन्तु कभी अपने निश्चय से डगमगाए नहीं। ऐसे प्रतिष्ठित जीवन की प्राप्ति को इन्होंने केवल अपनी कौम का ही आदर्श नहीं बनाया, बल्कि जहाँ कहीं भी ऐसे जीवन के लिए अन्य लोगों ने भी इच्छा प्रकट की, वहीं कंधे से कंधा मिला कर अपनी निर्मल कमाई में से उन्हें भी पल्ले से बहुत कुछ दिया।

खालसा पंथ के पाँच तख़्त

– डॉ. सुखदिआल सिंघ*

सिक्ख धर्म दुनिया से न्यारा धर्म है। इसलिए इसके अनुयायियों की संख्या बड़ी तेज़ी के साथ बढ़ती गई। इस बढ़ती तादाद में सिक्ख संगत की जत्थेबंदी की कोई न कोई प्रणाली समय-समय के अनुसार अपनाई जाती रही थी। श्री गुरु नानक देव जी जहाँ भी जाते थे, वहीं पर 'सिक्ख संगत' स्थापित कर देते थे। श्री गुरु अमरदास जी के समय इन 'सिक्ख संगतों' को 'मंजी-प्रथा' में पिरोया गया था। क्योंकि सिक्खों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ रही थी, इसलिए श्री गुरु अरजन देव जी के समय 'मंजी-प्रथा' को बदल कर इसकी जगह 'मसंद-प्रथा' शुरू की गई थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी तक मसंद-प्रथा बहुत अच्छी तरह चलती रही, परन्तु बाद में मसंदों के आचरण में ज़्यादा गिरावट आ जाने के कारण श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसे बंद कर दिया था। इसकी जगह खालसा प्रबंध स्थापित किया गया था।

१६९९ ई. की वैसाखी पर ख़ालसे द्वारा की गई साजना बहुमुखी थी। यह सिक्खों को एक पक्के जाबते में जत्थेबंद करने वाली प्रणाली भी थी और सिक्खों की स्वतंत्र हस्ती को दर्शाने वाला एलान भी था। मसंद-प्रथा ख़त्म कर दी गई थी। खालसा पंथ को पाँच प्यारों के नेतृत्व में जत्थेबंद किया गया था। समूचे भारतीय उप-महाद्वीप को विभिन्न क्षेत्रों में बाँट कर तख़्तों के प्रबंध में पिरो दिया गया था। सारे सिक्ख जगत का केंद्रीय स्थान श्री अकाल तख़्त साहिब, श्री अमृतसर होना था। क्षेत्रीय स्तर पर इसकी सुविधा के लिए और प्रबंध को स्थानीय स्तर तक पहुँचाने के लिए चार तख़्त और स्थापित किये गए थे। इस प्रकार ख़ालसे की स्थापना के बाद मसंद-प्रथा की जगह जो प्रबंध सामने आया, उसे हम पाँच तख़्तों वाला खालसाई प्रबंध कह सकते हैं।

यह ठीक है कि पाँच तख़्तों के प्रबंध को जानने के लिए हमारे पास कोई लिखित प्रमाण नहीं है। क्रांतिकारी लहरों के कोई लिखित प्रमाण नहीं होते। ये लहरें लोक-विश्वास के बल पर चलती हैं, क्योंकि ये लोक-लहरें होती हैं। लिखित दस्तावेज़ तो सरकारी कार्यालय में से पैदा होते हैं। क्रांतिकारी लहरें तो हुकूमतों के विरुद्ध ही होती हैं। जो लिखित गवाहियाँ होती भी हैं, वे संघर्ष में ख़त्म हो जाती हैं। श्री गुरु

*पंजाब इतिहास अध्ययन विभाग, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला– १४७००२, फोन : ९८१५८-८०५३९

गोबिंद सिंघ जी के समय तो सिक्ख पंथ का अति जानी व माली नुकसान हुआ था। श्री अनंदपुर साहिब को बुरी तरह से तबाह कर दिया गया था। ऐसी तबाही में जबकि गुरु जी के चारों साहिबज़ादे भी शहादत प्राप्त कर गए, लिखित सबूत और गवाहियाँ कैसे बच सकती थीं! गुरु जी के बाद बाबा बंदा सिंघ बहादुर के नेतृत्व में सिक्ख संघर्ष चलता रहा था। १७१६ ई. में बाबा बंदा सिंघ बहादुर को ७०० सिंघों सहित शहीद कर दिया गया। फिर १७३५-४० ई. तक सिक्ख कौम संभल नहीं सकी थी। इसके बाद सिक्खों का ऐसा संघर्ष शुरू हुआ कि १७६५-७० ई. तक पंजाब बुरी तरह से तबाह हो गया था। यहाँ खाए-पीए का ही लाभ था, बाकी सारा अहमद शाह का ही बन गया था। उस समय एक कहावत प्रचलित थी कि ''खाधा पीता लाहे दा, बाकी अहमद शाहे दा।'' कहने से तात्पर्य कि जो खा-पी लिया, पेट में भर लिया, वही अपना है, वही लाभदायक है, बचत रूप में रखी गई सामग्री आदि कब अहमद शाह अब्दाली व उसकी सेना लूट ले जाए, कोई भरोसा नहीं।

इस प्रकार यदि देखा जाये तो श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की तरफ से १६९९ ई. में खालसा साजे जाने के समय से लेकर १७६५ ई. तक लगातार ६६-६७ वर्ष बड़ा भयानक सिक्ख संघर्ष चलता रहा था। कोई बताए कि ऐसे भयानक संघर्ष में जहाँ अपनी जान भी बचानी मुश्किल होती थी, लिखित गवाहियाँ और दस्तावेज़ कैसे सुरक्षित रह सकते थे? नया साहित्य-सृजन भी नहीं किया जा सकता था। साहित्य-सृजन के लिए शांति और खुशहाली भरे माहौल की ज़रूरत होती है।

फलस्वरूप न ही सिक्खी-सिद्धांतों की व्याख्या संतोषजनक ढंग से की जा सकी थी और न ही सिक्ख इतिहास को लिखा जा सका था। अगर कुछ रचनाएं इस समय के दौरान अस्तित्व में आईं, उनमें इस्लामिक रचनाएं भी, जिनमें सिक्खों के सम्बन्ध में विरोधी भावना वाले विवरण थे। अगर किसी नानक नाम-लेवा व्यक्ति ने कुछ लिखा भी था, तो वे उसके व्यक्तिगत झुकाव वाले विवरण थे। व्यक्ति कैसा है, यह उसकी पृष्टभूमि और उसके चौगिर्दे पर निर्भर करता है। यही कारण है कि जो एकमात्र गुरमुखी रचनाएं ऐसे समय में लिखी भी गई थीं, इनमें भी सिक्ख धर्म को उचित ढंग से व्याख्यायित नहीं किया गया था। सही व्याख्या केवल संस्थाओं द्वारा लिखवाई गई रचनाओं में ही करवाई जा सकती थी।

उपरोक्त की रोशनी में यह बहाना खड़ा करना कि फलां बात की तो कोई गवाही या प्रमाण ही नहीं मिलता, यह बात तो केवल कल्पित है, एक शरारत से ज्यादा और कुछ नहीं है। अंग्रेज़ों के आने से पहले किसी का भी जन्म-प्रमाण-पत्र नहीं बनाया जाता था, इसलिए यदि कोई शरारती यह कह दे कि फलां व्यक्ति तो हुआ ही नहीं, क्योंकि उसका जन्म-प्रमाण-पत्र नहीं है,

तो यह बात विश्वसनीय नहीं लगती। कई चालाक व्यक्ति कत्ल कर सबूत को मिटा देते हैं और अपने आप को निर्दोष साबित करवा लेते हैं। कई बेकसूर भी नकली सबूतों के आधार पर फांसी लग जाते हैं। सबूतों या गवाहियों की भी कोई इतनी अहमियत नहीं, कि किसी को उसके आधार पर सही या गलत ठहराया जा सके। क्रांतिकारी लहरों का इतिहास विश्वास के आधार पर ही निर्भर होता है। ख़ालसे की साजना, पाँच तख़्तों की स्थापना आदि सब कुछ विश्वास पर ही आधारित है।

ख़ालसे की साजना बहुत ही सोच-विचार कर की गई थी। इस विधि द्वारा जो भी स्थापना की गई थी, वह भी बहुत सोच-विचार का ही निष्कर्ष था। पांचों तख़्त गुरु जी द्वारा ख़ालसे की साजना के बाद ही स्थापित कर दिए गए थे। तख़्त सचखंड श्री हजूर साहिब, अबिचल नगर नांदेड़ भी पटना साहिब की तरह पहले से ही सिक्ख संगत का केंद्र था। यह ठीक है कि हमारे ज्ञान के अनुसार यह केवल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नांदेड़ पहुँचने के कारण ही सामने आया था। यहाँ पहले श्री गुरु नानक देव जी भी आ चुके थे। श्री गुरु नानक देव जी के समय ही नांदेड़ साहिब दक्षिणी भारत की सिक्ख संगत का केंद्र था।

पाँच तख़्तों की स्थापना से समूचा सिक्ख जगत एक लड़ी में पिरोया गया था। तख़्त श्री पटना साहिब पूरबी भारत की सिक्ख संगत का केंद्र था। तख़्त श्री दमदमा साहिब राजपूताना, दक्षिणी-पूरबी पंजाब और दिल्ली, उत्तर प्रदेश आदि क्षेत्र की सिक्ख संगत का केंद्र था। तख़्त श्री केसगढ़ साहिब उत्तरी भारत की सिक्ख संगत का केंद्र था। ये चारों तख़्त सिक्ख संगत के क्षेत्रीय केंद्र थे। इन क्षेत्रों की सिक्ख संगत के अपने-अपने क्षेत्र के अनुसार अपने मसले अपने तख़्त से निपटाए जाते थे। चारों तख़्तों पर केंद्रीय और सर्वोच्च नियंत्रण श्री अकाल तख़्त साहिब, श्री अमृतसर का था। क्षेत्रीय तख़्त अपने-अपने क्षेत्र में तो स्वतंत्र थे, परन्तु अपने क्षेत्र से बाहर नहीं।

तख़्तों से निर्णय लेने की विधि सबके लिए एक-सी ही होनी थी। यह विधि थी— सरबत्त ख़ालसा द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की हजूरी में बैठ कर पाँच प्यारों के नेतृत्व में सर्वसम्मति से निर्णय लेने की। इस प्रकार लिया गया निर्णय 'गुरमता' कहलाता था। 'गुरमता' जब तख़्त साहिब से जत्थेदार के द्वारा जारी किया जाता था तो यह 'हुकमनामा' बन जाता था। यह निर्णय लेने की खालसाई मर्यादा थी और है। इस मर्यादा से परे जाकर किसी अन्य ढंग से निर्णय लेना मनमत समझी जानी थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि खालसाई मर्यादा के माध्यम से सिक्ख जगत की कुछ संस्थाएं अपने आप अस्तित्व में आ गई थीं। ये संस्थाएं थीं— पाँच तख़्तों की संस्था, सरबत्त ख़ालसा और गुरमते की संस्था, पाँच प्यारों की संस्था, श्री गुरु ग्रंथ साहिब की गुरुआई की संस्था आदि।

व्यक्तिगत अस्तित्व कहीं भी नहीं था अर्थात् खालसाई मर्यादा में किसी भी व्यक्ति विशेष की महत्ता नहीं है, बल्कि संस्था की महत्ता है।

तख़्तों के क्षेत्र का जो विभाजन है, यह एक मोटा-सा, साधारण-सा विभाजन है। क्योंकि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के बाद इस पाँच-तख़्ती प्रबंध को इच्छित रूप से विकसित नहीं किया जा सका, इसलिए इसकी रूप-रेखा तकनीकी रूप से पूरी तरह से निखर नहीं सकी। इस प्रसंग में संकुचित राजनीति के कुप्रभाव से सचेत रहने की ज़रूरत है।

कई शरारती लोग कह देते हैं कि जत्थेदार या ग्रंथी, गुरु साहिबान के समय नहीं थे। यह गलत है। इसका एक जवाब तो यह प्रश्न उठा कर ही दिया जा सकता है कि गुरु साहिबान के बाद क्या सिक्खों में कुछ भी नहीं हो सकता था? आज तख़्त सचखंड श्री हजूर अबिचल नगर साहिब नांदेड़ का विशाल परिसर है, मगर यह गुरु साहिब के समय नहीं था। राजनीतिक प्रभु-सत्ता के लिए समूचा संघर्ष गुरु साहिबान के बाद चला था। क्या इस सब कुछ को रद्द कर देना चाहिए? बाबा बंदा सिंघ बहादुर, नवाब कपूर सिंघ, स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया, महाराजा रणजीत सिंघ, सिंघ सभा लहर, अकाली लहर, गुरुद्वारा एक्ट, वर्तमान समय में असंख्य गुरु-स्थान गुरु साहिबान के समय नहीं थे, तो क्या इन सबको मानने से इन्कार कर देना चाहिए? बात तो विकास की है। हर कौम ने विकास करना है। विकास के द्वारा नयी प्राप्तियाँ भी होनी हैं और नयी तकनीक भी सामने आनी है।

दूसरी बात यह है कि गुरु साहिब के बाद श्री गुरु ग्रंथ साहिब और खालसा पंथ सिक्खों के गुरु हैं। ग्रंथ और पंथ के इस संयुक्त रूप में से सिक्ख जगत किसी तरह के भी फ़ैसले ले सकता है। अगर कोई ओहदा या तख़्तुस गुरु साहिबान के समय नहीं था और यह पंथ ने अपनी मर्यादा के द्वारा बाद में विकसित किया है तो भी यह गुरु के फ़ैसले के अनुसार ही अस्तित्व में आया है। सिक्ख पंथ की राय ही गुरु की राय है। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि संगत की राय को गुरु साहिब ने खुद कितनी महानता प्रदान की है! 'गुरु बीस विसवे, संगत इक्कीस विसवे' की कहावत इसी बात को ही प्रदर्शित करती है। खालसा पंथ अपनी ज़रूरत के अनुसार किसी समय भी और कोई भी निर्णय ले सकता है।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि सिक्ख धर्म में व्यक्ति की विशेषता नहीं, बल्कि संस्था की विशेषता है। पाँच तख़्तों की संस्था ही आज के समय में सर्वोच्च है। श्री अकाल तख़्त साहिब इस सर्वोच्चता का प्रतिनिधित्व करता है। कोई अकेला व्यक्ति कोई कार्यवाही नहीं कर सकता। आज गुरु-ग्रंथ और गुरु-पंथ की संयुक्त रूप से गुरुआई है। यह सरबत्त ख़ालसा के माध्यम से सामने आती है। श्री अकाल तख़्त साहिब सरबत्त ख़ालसा की सर्वोच्च संस्था है।

परची भक्त धंना जी की

*-डॉ. धरम सिंघ**

'परची' शब्द संस्कृत में 'परिचय' का तद्भव रूप है, जिसका अर्थ है— जान-पहचान। परची के कई अन्य भावबोधक शब्द भी मिलते हैं, जैसे— साखी, कथा, मसला और जन्म-साखी, परन्तु इन सभी शब्दों में कुछ सूक्ष्म भाँति के अंतर भी हैं। साखियां और जन्म-साखियां अधिकांशत: गुरु साहिबान की हैं। मसले इस्लामी सूफियों, पैगंबरों और फकीरों के हैं, जबकि परचियां प्रसिद्ध भक्तों और प्रसिद्ध सिक्खों की हैं, जैसे 'परची भाई घन्हईआ जी', 'परची भगतां कीआं, परचीआं भाई अड्डण शाह आदि। परची शब्द का प्रयोग ज्यादातर अड्डणशाही सेवापंथी साधुओं ने किया है। ये पद्य और गद्य में मिलती हैं। कुछ परचियां हिंदी से पंजाबी में भावानुवाद भी हुई हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु साहिबान, भक्त साहिबान, भट्ट साहिबान और गुरु-घर के निकटवर्ती सिक्खों की बाणी दर्ज है। यह एक दिलचस्प तथ्य है कि जिन-जिन भक्त साहिबान की बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हो सकी है वे सिक्ख साहित्य, इतिहास और सभ्याचार का हिस्सा तो बने ही, साथ ही अमर भी हो गए। वे भक्त साहिबान, जिनकी बाणी प्रवान न हो सकी, वे समय की धूल में खो गए। मध्यकालीन लेखकों ने जहाँ अपने-अपने ढंग से गुरु साहिबान के प्रति श्रद्धा और सम्मान पेश किया है, वहीं भक्त भी उनकी नज़र में रहे हैं, क्योंकि सिक्ख के लिए भक्त भी उतने ही सम्मान और अकीदत के पात्र हैं। इन लेखकों की लिखी हुई परचियां आज हमारे पास प्रकाशित और हस्तलिखित ग्रंथों के रूप में प्राप्त हैं। इस लेख में हम केवल भक्त धंना जी के बारे लिखी एक परची के साथ पाठकों की जान-पहचान करवा रहे हैं।

'प्रेम अंबोध' या 'परचियां भगतां कीआं' अठारहवीं सदी में लिखा गया एक ऐसा ही ग्रंथ है जिसमें भक्तों की परचियां हैं। इनके रचनाकारों ने अपने पूर्वजों से जो साखियां सुनी, वे अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार लिपिबद्ध कर दीं। ये परचियां जीवनीमूलक रचनायें हैं, जिनके प्रसंग या तो पूर्वकालीन परंपरा में से लिए गए हैं या फिर उस समय की प्रचलित विधि के अनुसार उनकी बाणी में से कथन लेकर उनके गिर्द साखियां या कथाएं बुन दी गई

**पूर्व प्रोफेसर, पंजाबी अध्ययन स्कूल, गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी, श्री अमृतसर— १४३००५, फोन : ९८८८१-३१८०८*

हैं। भक्त कबीर जी, भक्त नामदेव जी, भक्त रविदास जी तथा अन्य कई भक्तों की साखियां उनकी बाणी में से सुराग़ लेकर ही घड़ी गई हैं। 'परची भक्त धंना जी की' के कर्त्ता के बारे में अलग-अलग विचार मिलते हैं, लेकिन बहुत-से खोजकर्त्ता इनका कर्त्ता केवल दास को मानते हैं, जो श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का समकालीन बताया जाता है। अपने वर्णय-विषय और भक्तों की जीवनियाँ पेश करने वाला यह ग्रंथ काफ़ी लोकप्रिय रहा है, जिसका अनुमान इसकी हुई प्रतिलिपियों से लगाया जा सकता है।

भक्त धंना जी किसानी परिवार से सम्बन्धित राजपूताना जाट भाईचारे में से थे, जिनका जन्म भाई कान्ह सिंघ नाभा के अनुसार राजस्थान के टांक क्षेत्र में धूआन गाँव में संवत् १४७३ (ईस्वी सन् १४१६) में हुआ। कुछ विद्वान भक्त धंना जी की पृष्टभूमि जयपुर ज़िले के गाँव डिगी किशनगढ़ बताते हैं, जहाँ से इनके बुज़ुर्ग गाँव धूआन में जा बसे थे। इनका जीवन-दर्शन गुरमति दर्शन के बिलकुल अनुकूल था, इसीलिए आपके तीन शबद श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल करने के लिए स्वीकार किये गए। इन शबदों में जहाँ प्रभु-भक्ति सर्वोपरि है, वहीं गृहस्थ जीवन को भी उतना ही महत्व दिया गया है। धनासरी राग में दर्ज भक्त धंना जी का एक शबद इस प्रकार लगता है जैसे परमात्मा को दिया गया माँग-पत्र हो। इसमें भक्त जी ने दाल, राशन, घी आदि खाने वाली वस्तुएँ माँगी हैं। पैरों में पहनने के लिए जूते, तन ढकने के लिए कपड़ा, दूध पीने के लिए दुधारू गाय-भैंस और सवारी के लिए घोड़ी की मांग भी की है। इन सभी वस्तुएँ से अधिक अहमियत वाली 'घर की गीहनि' (गृहणी अर्थात् पत्नी) है, जिसके साथ उन्हें गृहस्थी चलानी है। दीन और दुनिया का यह अत्यंत सुंदर सुमेल है, जिसके बारे में गुरु साहिबान बार-बार ताकीद करते हैं।

भक्त धंना जी के बारे में बताया जाता है कि वे भी भक्त कबीर जी की भांति भक्त रामानंद जी के शिष्य थे। भक्त रामानंद जी उत्तरी भारत में चली भक्ति लहर के मुखिया माने जाते हैं और ये निर्गुण भक्ति के प्रचारक थे। चर्चाधीन परची में भक्त त्रिलोचन जी और भक्त धंना जी के मिलाप की साखी है जो ऐतिहासिक तौर पर सही नहीं, परन्तु इससे भक्त त्रिलोचन जी की मान-प्रतिष्ठा का पता अवश्य चलता है।

गुरमति दर्शन में सगुण भक्ति को स्वीकृति नहीं। जो महापुरुष बेशक पहले सगुणवादी भी थे, परन्तु बाद में आत्म-चिंतन कर, किसी अन्य उच्च आत्मा के प्रभाव में या किसी अन्य कारण से निर्गुण भक्ति की तरफ आ गए, वे गुरु-घर में प्रवान हो गए। भक्त नामदेव जी और भक्त धंना जी ऐसी ही उदाहरणें हैं। मध्यकालीन वृत्तांतकारों का उद्देश्य किसी भी महापुरुष की महिमा या अभिनंदन करना है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि 'परची भक्त धंना जी की' का महत्व दोहरा है— ऐतिहासिक

और साहित्य ऐतिहासिक। श्री गुरु नानक देव का जीवन-वृत्तांत लिखने के लिए जिस प्रकार जन्म-साखियों को अनदेखा नहीं किया जा सकता, ठीक इसी तरह भक्त साहिबान की जीवनियाँ लिखने के लिए ये परचियां भी उतनी ही उपयोगी हैं।

परची धंने जी की

सोरठा॥
सुनत नाद सो कांन म्रिग जिउ छक वह जावई।
बिआकुल होइ परान आइ
ठाढा तहा होइ रहै।...
दोहरा॥
धंनै मनु मान सीपु था सुआत बूंद हरि आहि।
ता कउ भेटत साति सरि डुबकी लीनी ताहि।
दोहरा॥ मै अजानु जानउ नही सेवा तोहि अपार।
दीन छीन गथहीन जांन करि सरधा राखु मुरार।
चौपई॥ मै अजानु तुहि सेव न जानउ।
ता ते तेरै मनि नही मानउ।
मै बालकु तू ठाकरु मोरा।
जनम जनम मै सेवकु तेरा।
सोई ठाकुरु ठकुराई जानै।
पततनि पतिताई चित न आनै।
पतित उधारन बिरदु वडिआई।
आदि जुगादी पैज रखाई।
जो अपराध देखो मो माह।
सो किरपा करि छिमा कराहु।
दोहरा॥ जो जो अउगन मुझि मै
सभ बखस गुपाल।
आपनी ओर निहारीए
खाइए पाकु दइआल।...
दोहरा॥ जो दरसनु दुरलंभु है लेत है प्रेम सवाद।
सो दरसनु सभ देवतन पाइओ संत प्रसादि।...
दोहरा॥ मोर मुकट चंद्रका सोहै मोहै मनु संसार।
नैना बुधि चित थकत हुइ
रहै निहारि निहारि।...
दोहरा॥ मुनि जन रिख किंनर
सकल देवी देव जो आहि।
हरि मुखि सोभा कउ
निरख चारि पदारथ पाहि।...
दोहरा॥ चरन कवल तारन तरन
बंदन जगत निधान।
तीन ताप ते जग सकल
बाचत धरत धिआन।...
दोहरा॥ सभ घट पूरन ब्रहम
जो सो धंने बूझि बुझाइ।
त्रिभवण जोति निहारई
का पहि कहै बनाइ।...
दोहरा॥ पूरन गिआन कउ
पाइओ बेद बतावत ताहि।
तउ प्रेमु नहीं जात है अधिक होत अवगाहि।

आदर्श सामाजिक व्यवस्था का प्रतीक : खालसा

*-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ**

सन् १६९९ की वैसाखी का दिन अद्‌भुत समर्पण व अद्वितीय समृद्धि का दिन था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री अनंदपुर साहिब में इस पाक दिवस पर एकत्र सिक्ख संगत से पांच शीश मांगे थे। अपने गुरु के आदेश पर शीश दे देने, समय की आवश्यकता के अनुरूप बलिदान दे देने के अनेक उदाहरण मिल जायेंगे, किन्तु श्री अनंदपुर साहिब में एकदम भिन्न स्थिति थी। गुरु साहिब ने किसी सिक्ख विशेष से नहीं, वहां उपस्थित हजारों की संगत में से किसी भी एक से आगे आने को कहा। उन्होंने शीश अर्पण करने का कोई कारण नहीं बताया। गुरु साहिब सम्भवत: सिक्खों के गुरु पर विश्वास एवं मृत्यु के खौफ से बेखौफ रहने की परीक्षा ले रहे थे। उन्हें आश्वस्त होना था कि वे जिस भविष्य का निर्माण करने जा रहे हैं उसकी नींव कितनी मजबूत होगी। गुरु साहिब की शीश की मांग पर भाई दया राम आत्म-प्रेरणा से खड़े हुए। उन्होंने कोई प्रश्न नहीं किया, कोई तर्क नहीं किया। बस, गुरु की आज्ञा को शिरोधार्य कर यह सिद्ध कर दिया कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को जिस विश्वास की चाह थी वह तो श्री गुरु नानक साहिब के काल से ही सिक्खों में भरपूर हो रहा था। सिक्ख को तो अपने गुरु में तीनों लोक के दर्शन होते थे :

ना को मेरा हउ किसु केरा ॥
साचा ठाकुरु त्रिभवणि मेरा ॥

(पन्ना १०९)

गुरु के अतिरिक्त न कोई अन्य सिक्ख का है और न ही सिक्ख किसी अन्य को अपना मानता है। मात्र वाहिगुरु, परमात्मा ही उसका है और वह भी उसी का है। वाहिगुरु उसके लिये सम्पूर्ण ब्रह्मांड है। वह गुरु के लिये ही जीता है और उसी के लिये मरता है। यह बात भाई दया राम ने सिद्ध कर दिखाई। उनके बाद भाई धरम दास, भाई मोहकम चंद, भाई साहिब चंद व भाई हिंमत राय ने भी एक के बाद एक अपना शीश अर्पित कर गुरु-प्रति विश्वास की पुष्टि की। इन पांच प्यारों ने जिस विश्वास के साथ गुरु साहिब को शीश अर्पित किये थे, गुरु साहिब ने उस विश्वास को दोगुना, चौगुना करते हुए जब इन्हें नई वेशभूषा में सजाकर उनके नाम के साथ 'सिंघ' शब्द जोड़कर जनसाधारण के सामने प्रस्तुत किया तो इन पांच प्यारों के शीश गौरव, सम्मान, उत्साह व आशा की सुंदर दसतार से सजे हुए थे। उनके शीश एक आदर्श समाज के शीश

**ई-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन : ९४१५९-६०५३३ , ८४१७८-५२८९९*

बन गये, जिसकी आत्मा में अमृत रच-बस रहा था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उन पांच प्यारों को लोहे के बाटे में जल व बताशे डाल कर, गुरबाणी का पाठ करते हुए तैयार किया अमृत छका कर उन्हें तन-मन से निर्मल कर दिया। इसके बाद श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने स्वयं प्रार्थना कर, पांच प्यारों से अमृत-पान कर एक ऐसे समाज की रचना का स्वप्न साकार किया जिसकी कल्पना श्री गुरु नानक साहिब ने की थी :

निधि सिधि निरमल नामु बीचारु ॥
पूरन पूरि रहिआ बिखु मारि ॥
त्रिकुटी छूटी बिमल मझारि ॥
गुर की मति जीइ आई कारि ॥ (पन्ना २२०)

एक ऐसा संसार, ऐसा समाज हो, जहां मात्र और मात्र गुरु की शिक्षाओं, आज्ञाओं का पालन किया जाता हो और उनके अनुसार पूरा जीवन जीया जाता हो; जहां परमात्मा की भक्ति-भावना को जीवन की सबसे बहुमूल्य पूंजी माना जाता हो; जो स्थान विकारों, माया के विष से पूर्णत: मुक्त हो; जहां रजोगुण, तमोगुण व सतोगुण के जाल से बाहर आकर सहजता व निर्लिप्तता का राज्य हो। खालसा के गुणों का वर्णन, जो खालसा पंथ के सजने के बाद मिलता है, ऐसी ही व्यवस्था का अनुपालन करने वाला दिखता है :

खालसा सोइ जो पंच को मारै।
खालसा सोइ जो करम को साड़ै ॥
खालसा सोइ मान जो तिआगै।
खालसा सोइ जो परत्रीआ ते भागै ॥४६ ॥
(तनखाहनामा)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ऐसे खालसा पंथ की सृजना की जो काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार जैसे विकारों पर नियन्त्रण पाकर उनसे दूर हो जाये। ऐसा खालसा, जो अपने अंदर कर्मकांड, ढोंग, आडंबर और पाप-कर्मों की वृत्ति का नाश करने में सफल हो जाये। ऐसा खालसा, जो विनम्रता, दया, करुणा व परोपकार की मूर्ति हो और इन्हें अपना धर्म समझे। ऐसा खालसा, जो पराये तन, धन पर दृष्टि न डाले और दूसरों के अधिकारों का सम्मान करे। ऐसे खालसा से मिल कर बना समाज गुणों व शुभ कर्मों पर आधारित समाज था, जहां धर्म की प्रतिष्ठा संभव थी। इसके लिये परम साहस व वीरता की आवश्यकता थी, जिसे श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सिक्खों में गुरबाणी की प्रेरणा से उत्पन्न किया और ककारों के तेज से दृढ़ किया। गुरु साहिब ने पाउंटा साहिब में देश के सर्वश्रेष्ठ कवियों, विद्वानों को बुलाकर अपने दरबार में स्थान दिया व सत् साहित्य की रचना कराई, जो एक ऐतिहासिक कदम था। जो कवि-जन राजदरबारों के गुणगान के अभ्यस्त हो चुके थे उनसे परमात्मा की स्तुति लिखवाना और कलम से मानवीय मूल्यों की वन्दना करवाना एक बड़े परिवर्तन का आरंभ था। गुरु साहिब ने स्वयं जापु साहिब, अकाल उसतत, बचित्र नाटक, गिआन प्रबोध जैसी बाणी से सिक्खों की अंतर्चेतना को मुखर करने का प्रयास किया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी एक ऐसे समाज की रचना करना चाहते थे जहां धर्म की सत्ता, प्रतिष्ठा हो, सच धारण

करने वालों का सम्मान हो और अधर्म, झूठ, अनीति के मार्ग पर चलने वालों का कोई स्थान न हो। उनका संकल्प अधर्म, अनीति का समूल नाश करना था। यह धर्म व सच को धारण करके ही संभव था। इसके लिये वीरता आवश्यक थी। अपने विकारों से लड़ कर उन्हें वश में करना एक बड़े युद्ध की तरह था। इसके लिये गुरु साहिब ने जीवन के कड़ी मर्यादायें निश्चित कीं। ये ऐसी मर्यादायें थीं जिनका पालन उन्होंने स्वयं भी जीवन भर किया। गुरु साहिब के दरबार के प्रतिष्ठित रत्न भाई नंद लाल जी के अनुसार खालसा की जीवन-मर्यादा को सर्वप्रथम परमात्मा की भक्ति से जोड़ा गया। यह वही मार्ग था जिस पर श्री गुरु नानक साहिब ने चलना सिखाया था :

मेरे मीत गुरदेव मो कउ राम नामु परगासि ॥
गुरमति नामु मेरा प्रान सखाई
हरि कीरति हमरी रहरासि ॥ (पन्ना १०)

भाई नंद लाल जी ने भी गुरु साहिब के इसी अनुरूप कथन को सबसे पहले उद्धृत किया :

नंद लाल तुम बचन सुणहु सिख करम है एहि।
नामु दानु इसनान बिन करे
ना अंन सिउं नेंहु ॥२ ॥ (तनखाहनामा)

खालसा को गुरु साहिब ने निराकार परमात्मा के साथ जोड़ा और भक्ति के माध्यम से सद्गुणों व तन-मन की निर्मलता को प्राप्त करने की बात कही। यह खालसा का मौलिक कर्म था। गुरु साहिब ने कहा कि इस मार्ग को छोड़ कर खालसा किसी अन्य युक्ति, विचार को ध्यान में भी न लाये। परमात्मा की भजन-बन्दगी करने वाले उस समय भी बहुत लोग थे। वे बाहरी रूप से बन्दगी तो करते, किन्तु उनका आचरण कुछ और ही होता। इससे समाज में दुख, पाप व्याप्त थे। खालसा वचन व कर्म की एकरूपता का प्रतीक बन कर उभरा :

वाह गुरू नित बचन उचारे।
वाह गुरू को हिरदै धारे।...१० ॥
(रहितनामा भाई देसा सिंघ)

सिक्ख का समर्पण मात्र उस परमात्मा के प्रति था जिसका कोई चक्र, प्रतीक, वर्ण, जाति नहीं है, जिसका कोई रूप, रंग, आकार, वेश नहीं है। सिक्ख के लिये परमात्मा सार्वभौमिक, सर्वकालिक सत्ता, ज्ञान का अपार प्रकाश व गुणों के अनंत तेज जैसा है। परमात्मा के इसी स्वरूप के साथ सिक्ख श्री गुरु नानक साहिब के काल से ही जुड़ा हुआ था। परमात्मा का नाम जपना ही उसकी भक्ति थी। परमात्मा के अनुकूल आचरण ही उसका धर्म था। खालसा की भक्ति व आचरण की एकरूपता उसके वचन और कर्म में निरंतर प्रकट हुई। धर्म के लिये प्रतिबद्धता व आचरण की पवित्रता के संकल्प के कारण ही खालसा एक साथ भक्त भी था, ज्ञानी भी था, योगी भी था, राजा भी था। वह क्षत्रिय भी था, संत भी था, त्यागी भी था और सूर्य की तरह सारे संसार को प्रकाशित करने वाला भी था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का खालसा स्वयं परमात्मा का सजाया हुआ आदर्श पुरुष था, जिसने अमृत-पान कर अपने अंतरमन में धर्म व सच को अमर

कर लिया था।

जब से सृष्टि बनी थी, खालसा में पहली बार परमात्मा का न्याय व भावना प्रत्यक्ष हुई थी। परमात्मा को सभी धर्म किसी न किसी रूप में एक परम शक्ति मानते थे। इसके बावजूद संसार में विभिन्न शक्तियां स्वयं को दाता, कर्ता सिद्ध करने में लगी रहती थीं। समाज वर्णों, वर्गों, जातियों, धनी-निर्धन, सबल-निर्बल, राजा-प्रजा में बंटा हुआ था। खालसा पंथ ऐसी व्यवस्था के रूप में सामने आया जिसमें किसी भी तरह का कोई भेदभाव नहीं था। जिसने भी अमृत-पान किया वह खालसा बन कर समान स्थान का अधिकारी बन गया। अमृत तैयार करने व अमृत-पान कराने की विधि सभी के लिये एक जैसी थी। अमृत-पान करने के बाद सभी सिंघ व कौर थे। सभी के लिये एक समान मर्यादायें थीं। सभी को एक ही तरह पांच ककार धारण करने थे। किसी की न कोई जाति रही, न वर्ण, न वर्ग। यह समानता मानव-मात्र का सम्मान स्थापित करने वाली सिद्ध हुई। इससे सभी में आत्मविश्वास उत्पन्न हुआ और वे उत्साह से भर उठे। किसी के पास धन था या नहीं था, किसी के पास परिवार, कुल का आधार था या नहीं था, कोई विद्वान था या नहीं था, अब इसका कोई अर्थ नहीं रह गया था। सभी खालसा बन कर खालसाई गौरव से भर उठे थे, क्योंकि इसमें परमात्मा की कृपा की अनुभूति भरी हुई थी। खालसा की आस्था एक परमात्मा में थी, जो परस्पर समानता का पुष्ट आधार था। सभी सिंघों में अत्यंत सुदृढ़ भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित हुआ। मर्यादा बनी कि जिस किसी को भी कोई अन्य सिंघ मिलता, तो वह उसे 'वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतिह' बोल कर अभिवादन करता। इससे सभी सिक्खों के मध्य रूहानी सम्बन्ध स्थापित होने लगा, जिसका गवाह स्वयं वाहिगुरु परमात्मा बनता। सम्बन्धों का दूसरा आधार प्रत्येक सिक्ख को गुरु का स्वरूप समझ कर उसे आदर देना था। आदर के साथ ही प्रत्येक सिक्ख अन्य सिक्खों की सेवा में परम सुख का अनुभव करने लगा था। यह अद्‌भुत भावना थी, जिसने खालसा को एक इकाई के रूप में विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई :

इकै सुनहिरै सभी रलाए।
भिंन भेत कछु रखन न पाए।...१२॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश, पृष्ठ ७७)

खालसा प्रेमपूर्ण समाज के रूप में उभरने लगा। परस्पर सहयोग की भावना ने जहां सिक्खों को सेवा और परोपकार के लिये प्रेरित किया वहीं धर्म के लिये जब कुर्बान होने की बात आई तो सभी एक दूसरे के आगे खड़े होने लगे थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आदेश पर सभी सिक्ख अपने घरों में लंगर लगाते और ध्यान रखते कि कहीं कोई आगन्तुक भूखा वापिस न जाने पाये। यह भावना व आचरण खालसा की भक्ति के अंग के रूप में स्वीकार किया गया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसके साथ ही बल को भी जोड़ा, ताकि धर्म का मार्ग

निर्बाध चलता रहे, इसी लिये पांच ककारों में कृपाण को भी शामिल किया गया था। यह किसी योद्धा की तलवार के समान नहीं थी। सिक्ख की तेग एक संत, भक्त की तेग थी, जिससे तेग के प्रयोग में बड़ा अंतर आ गया था :

यौ कहि कै श्री सतिगुरू,
गल तेगो दीनो पाइ।
करद चकर सिर पर धरैं,
मुखों अकाल जपाइ॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश, पृष्ठ ७७)

गुरु साहिब ने खालसा को सशस्त्र किया तो शस्त्रों का सदुपयोग भी सिखाया। खालसा पंथ बने एक वर्ष ही हुआ था कि युद्ध आरंभ हो गये। उल्लेखनीय है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के काल में जितने भी युद्ध हुए उनमें से एक भी युद्ध गुरु साहिब ने आरंभ नहीं किया। सिक्खों पर युद्ध थोपे गये जिनका उत्तर देना सिक्खों की विवशता थी। गुरु साहिब सभी युद्धों में विजयी रहे और शत्रु सेनाओं को हर बार करारी हार का सामना करना पड़ा था। अभी तक उदाहरण थे कि जीतने वाली सेना जीत के बाद इलाकों पर कब्जा कर लिया करती थी और भारी लूटपाट, तबाही करती थी। लोगों को कैद कर लिया जाता था, सम्पत्तियां जब्त कर ली जाती थीं।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसा को शस्त्र उठाना सिखाया, ताकि अधर्म की राह रोकी जा सके। उनके लिये युद्ध में विजय का अर्थ धर्म की विजय था। गुरु साहिब ने युद्धों में विजय के बाद किसी भी क्षेत्र पर अपना नियन्त्रण नहीं स्थापित किया। सिक्खों को आदेश था कि किसी भी नागरिक को कोई क्षति न पहुंचाई जाये। एक युद्ध में जब राजा हरी चंद को मार कर गुरु साहिब ने शानदार विजय प्राप्त की तो विरोधी सेना भाग खड़ी हुई। युद्ध समाप्त हो जाने के बाद श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी स्वयं युद्ध-स्थल पर गये और युद्ध में मारे गये सभी सैनिकों के शवों का उनके धर्म के अनुसार अंतिम संस्कार कराया। इनमें उनके पक्ष के भी सैनिक थे और विरोधी पक्ष के भी। घायल सैनिक भले ही किसी भी पक्ष के थे, उनके उपचार की व्यवस्था कराई। खालसा के लिये युद्ध धर्म तथा अधर्म का था और लड़ने की एक ही विधि थी— धर्म पर अडिग रहना।

खालसा की वीरता की तुलना किसी योद्धा की वीरता से संभव नहीं, क्योंकि उद्देश्य का अंतर है। सामान्य योद्धा अपने कर्त्तव्य का पालन करता है। सिक्ख अपने धर्म का पालन करता है। कर्त्तव्य में बाध्यता होती है, जबकि धर्म में स्व-प्रेरणा व परमात्मा की कृपा का योग होता है। सैनिक के लिये वीरता युद्ध में विजय तक सीमित है, किन्तु खालसा के लिये वीरता परमात्मा की भक्ति, विकारों का त्याग, सद्गुणों की अडोलता, सेवा, परोपकार, अन्याय, जब्र का प्रतिकार भी है। अहमद शाह अब्दाली हजारों स्त्रियों, बच्चियों को बंदी बना कर ले जा रहा था। सिक्ख बीच में कहीं नहीं थे, किन्तु वे बीच में आये, क्योंकि अन्याय का विरोध उनका धर्म था। सभी बंदी स्त्रियों को मुक्त करा कर

सम्मान सहित उनके स्थानों पर भेजना खालसाई वीरता थी। जैतो के गुरुद्वारा गंगसर साहिब में भंग हुए श्री गुरु ग्रंथ साहिब का श्री अखंड पाठ साहिब पुन: आरंभ कराने व गुरुद्वारे में प्रवेश पर लगाये प्रतिबन्ध को हटाने के लिये संसार का अब तक का सबसे लंबा लगभग दो वर्ष का मोर्चा लगाना भी उनकी वीरता का निराला पक्ष था। पहले पांच महीने तक पच्चीस-पच्चीस सिक्ख जत्थों का श्री अकाल तख्त साहिब के समक्ष पूर्णत: शांत, अहिंसक रहने की अरदास कर जैतो जाना और ब्रिटिश पुलिस की बर्बरता सहना, ऐसी वीरता थी, जिससे पूरा भारतवर्ष दंग रह गया था। इसके बाद पांच-पांच सौ के शहीदी जत्थों ने इतिहास रचा। पहला जत्था जब जैतो पहुंचा तो अचानक गोलियां बरसने लगीं। सिक्ख न तो घबराये, न पीछे हटे, न प्रतिकार किया। जिस दिशा से गोलियां बरस रही थीं उसी दिशा में आगे बढ़ते गये। सिक्ख गोलियां खाकर नीचे गिर रहे थे, शहीद हो रहे थे, फिर भी शेष सिक्खों के कदम नहीं रुक रहे थे। पूरा देश ही नहीं, सारा संसार अनगिनत शहीदीयों से स्तब्ध रह गया, किन्तु सिक्ख अविचल रहे। इसके बाद भी पांच-पांच सिक्खों के सोलह और जत्थे जैतो गये। अरदास करने के बाद शांतिपूर्ण रहना और कोई प्रतिकार न करते हुए सारे जुल्म सहना, प्राण अर्पित कर देना एक अनोखी वीरता थी, जिसके उदाहरण केवल सिक्ख इतिहास में ही मिलते हैं।

खालसा वास्तव में लोगों का समुदाय-मात्र नहीं, कलियुग में सतियुग वापिस लाने की एक अवधारणा है। एक ऐसी व्यवस्था, जहां गुणों का शासन हो। संतोष व सहज के बिना आदर्श सामाजिक व्यवस्था संभव नहीं है। खालसा पंथ के लिये एक ऐसा समय भी था जब सिक्खों ने घोड़ों की काठियों पर सोकर जंगलों में रातें गुजारी थीं और मुठ्ठी भर चने खाकर पेट भर लिये थे, फिर भी अपना आत्मविश्वास कम नहीं होने दिया था। जब हुक्मरानों ने घोषणा कर दी थी कि सिक्ख अब समाप्त हो गये हैं तब भाई बोता सिंघ और भाई गरजा सिंघ जैसे सिक्ख सारे खतरों को नकारते हुए नगर के बीचोबीच आ खड़े हुए थे कि सिक्ख अभी जीवित हैं। खालसा होना अपने मन पर पूरा नियन्त्रण होना है। मन कभी मर्यादाओं से विचलित न हो, धर्म से डिगे नहीं और सदैव आशा एवं विश्वास से भरा रहे। खालसा होना अपने मन का शासक होना है। यही खालसा का राज करना है :

. . . मनि जीतै जगु जीतु ॥ *(पन्ना ६)*

खालसा, जिसने गुरु की कृपा और प्रेरणा से अपना मन जीत लिया है, अजेय है।

सांझीवालता एवं सरबत्त का भला

*-डॉ. शमशेर सिंघ**

मानव-स्तर पर होने वाला अंदरूनी और बाहरी शख्सी विकास सभ्याचार के घेरे में आता है। रोज़मर्रा जीवन की अनुप्रयुक्त क्रियाएं अर्थात् रीति-रिवाज़, विश्वास, पहनावा, खान-पान, रहन-सहन, जीवन-मूल्य सभ्याचार के क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। गुरमति सभ्याचार ने मानव एकता या ईश्वरीय एकता, धार्मिक-क्रियायों की एकात्मकता, समानता, सांझीवालता, परो पकारता, किरत, नाम जपना, बाँट कर छकना, मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता, पंच-प्रधानी प्रणाली आदि नये सभ्याचार की सृजना की।

सिक्ख धर्म मानव-कल्याण का धर्म है। इसके पैरोकारों, बाणीकारों और व्याख्याकारों ने सिक्ख धर्म के बुनियादी नियमों में सांझीवालता के सिद्धांत को महत्ता प्रदान की है। गुरु के सच्चे सिक्ख की नज़रों में सारा संसार एक समान है। वह सारे संसार में प्रभु की ज्योति का प्रकाश फैला हुआ देखता है। प्रत्येक व्यक्ति को 'हरि का रूप' कह कर प्यार करता है, उसका सम्मान करता है। सिक्ख धर्म का ईश्वर सारे संसार का ईश्वर है। सिक्ख धर्म का गुरु सबका सामूहिक रूप से भला चाहता है। सिक्ख धर्म के धर्म-स्थान सबके साझे हैं, धर्म-ग्रंथ साझा है, समाज एक साझा समाज है। सिक्ख सुबह-शाम अरदास में संसार के सभी लोगों का भला मांगता है। सांझीवालता का साधारण अर्थ तो यही लिया जाता है कि सभी लोग बराबर हैं, कोई ऊँचा और कोई नीचा नहीं है। यह अर्थ कई बार सिद्धांत रूप में ही देखने में आता है। हम कहते तो हैं, परंतु अमल नहीं करते। गुरु जी ने इस सिद्धांत को इस प्रकार अमल में लाकर दिखाया है :

धनु धनु हरि गिआनी सतिगुरू हमारा
जिनि वैरी मित्रु हम कउ
सभ सम द्रिसटि दिखाई॥ *(पन्ना ५९४)*

गुरमति विचारधारा में सिद्धांत पहले अमल में लाया जाता है, जिससे सिद्धांत अपने आप प्रकट होता है, जैसे गुरु-संगत में हर व्यक्ति जात-पांत, ऊंच-नीच और गरीब-अमीर के भेदभाव के बिना बैठ सकता है। संगत का यह रूप व्यवहारिक रूप है, इसके लिए किसी

**११३३, शेखूपुरा, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला— १४७००२*

प्रकार के सिद्धांत या ख़्याल को ज्यादा सैद्धांतिक रूप में दिखाने और प्रकट करने की आवश्यकता नहीं है। गुरु जी ने जात-पांत के भेदभावपूर्ण विभाजन से ज्यादा कर्म-सिद्धांत को प्रमुखता दी है। जो व्यक्ति अच्छे कर्म करता है, वह अच्छा है, जो बुरे कर्म करता है, वह नीच और बुरा है :

— जाणहु जोति न पूछहु जाती
आगै जाति न हे ॥ (पन्ना ३४९)
— सा जाति सा पति है जेहे करम कमाइ ॥
(पन्ना १३३०)

जात-पांत का विभाजन मनुष्य का अपना बनाया हुआ है। प्रभु के दर पर कोई जाति नहीं। प्रभु हमारा सबका पिता है, मालिक है, पालन-पोषण करने वाला है। बुरे लोगों को सज़ा भी वही देता है। वह इन्साफ करने वाला है। गुरु साहिब का उपदेश है कि ऐसे सर्वसमर्थ, सर्वसाझे परमात्मा को ही याद किया जाये :

— एकु पिता एकस के हम बारिक
तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)
— सभना जीआ का इकु दाता
सो मै विसरि न जाई ॥ (पन्ना २)

मानव के मन में द्वैत-भाव तभी पैदा होता है, जब उसके मन में मेर-तेर है अर्थात् 'यह मेरा है, वो तेरा है' की भावना उत्पन्न होती है। मैं-मेरी की भावना बंधन का कारण बनती है। अहंकार के कारण ही मनुष्य मैं-मेरी का शिकार होता है। प्रभु-हुक्म को जान लेने से अहंकार का विनाश हो जाता है। गुरु के हुक्म को जानने के बाद मानव के मन में अपने और पराए का भेदभाव समाप्त हो जाता है। फिर कोई दुश्मन और पराया नहीं दिखाई देता। सिक्ख, सेवक खसम (मालिक प्रभु) का बंदा बन जाता है :

मेरा तेरा जानता तब ही ते बंधा ॥
गुरि काटी अगिआनता तब छुटके फंधा ॥...
ना को दुसमनु दोखीआ नाही को मंदा ॥
गुर की सेवा सेवको नानक खसमै बंदा ॥
(पन्ना ४००)

सांझीवालता का प्रेरणा-स्रोत गुरु है। गुरु सबका भला चाहता है। गुरु का शबद सर्वसाझा है, सब संसार के आत्मिक और दुनियावी कल्याण के लिए है। गुरु की बाणी संसार के सभी जीवों के कल्याण के लिए है :

गुर दरसनि उधरै संसारा ॥
जे को लाए भाउ पिआरा ॥ (पन्ना ३६१)

गुरमति का अकाल पुरख एक है, सबका साझा है। अकाल पुरख के लिए सभी साझे अर्थात् बराबर हैं, एक जैसे हैं। वह सभी में ज्योति रूप में विराजमान है। सभी उसका आसरा लेते हैं। वह सबका प्रतिपालक पिता

है। उसकी संतान हम सब हैं। उसके दर पर सांझीवालता वाला व्यवहार होता है :

तूं साझा साहिबु बापु हमारा ॥
नउ निधि तेरै अखुट भंडारा ॥. . .
सभु को आसै तेरी बैठा ॥
घट घट अंतरि तूंहै वुठा ॥
सभे साझीवाल सदाइनि
तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ ॥ (पन्ना ९७)

गुरु साहिब ने सांझीवालता का केवल सैद्धांतिक प्रकटावा ही नहीं किया, बल्कि आपने सबके साथ बराबर का व्यवहार किया, समाज में दबे-कुचले और पिछड़े लोगों को गले से लगाया। गुरु जी ने अहंकारी और (कथित) अमीर लोगों को स्वीकार नहीं किया। अमीरों और अहंकारियों को सबके साथ नम्र-भाव के साथ, भ्रातृ-भाव के साथ व्यवहार करने का उपदेश दिया :

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि
वडिआ सिउ किआ रीस ॥ (पन्ना १५)

श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना के समय गुरमति की कसौटी पर परखी और खरी उतरी हर बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जगह दी। बाणी की संपादना के समय सभी भक्त साहिबान, जिनकी जाति, पेशा, क्षेत्र चाहे कोई भी था, नहीं विचारा गया। सभी भक्त साहिबान को एक साझी जगह पर एकत्रित कर दिया, जो कि भारतीय धार्मिक परंपरा में इससे पहले बिलकुल नहीं था। यह कदम सांझीवालता की एक अद्वितीय मिसाल थी। श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने उन महानुभावों को भी सम्मान प्रदान किया, जिन्हें समाज में कोई निकट नहीं आने देता था, छूत कह कर दुत्कार दिया जाता था। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना से सांझीवालता की अद्वितीय और अमर मिसाल हमारे सामने आती है, जो संसार में अन्य कहीं नहीं मिलती।

गुरबाणी में सेवक, सिक्ख, संत, साध के नाम आते हैं। ये सभी आदर्श दैवी मानव के प्रतीक हैं। इनके जीवन में उदारता, विशालता उच्च दर्जे की थी। इन महापुरुषों ने सारे संसार के जीवों में प्रभु-ज्योति को देखा और सम्मान दिया। संतों की महिमा का कथन नहीं हो सकता। संतों का व्यवहार केवल नाम होता है, प्रभु की यश-कीर्ति करना होता है। मित्र और शत्रु उनके लिए एक समान हैं :

संत रहत सुनहु मेरे भाई ॥
उआ की महिमा कथनु न जाई ॥. . .
मित्र सत्रु जा कै एक समानै ॥
प्रभ अपुने बिनु अवरु न जानै ॥ (पन्ना ३९२)

दूसरा मुख्य रूप से नाम ब्रह्मज्ञानी का आता है। ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म का वेत्ता, सिक्खी जीवन-

आदर्श का शिखर है। वह ब्रह्म की भांति समदर्शी होता है। जैसे सूरज अपनी धूप बिना किसी भेदभाव के सबको एक समान प्रदान करता है, इसी प्रकार ब्रह्मज्ञानी भी सदा ही निरदोख होता है। उसकी दृष्टि एक समान होती है। उसे सब बराबर दिखाई देते हैं। मित्र और दुश्मन का उसमें भेदभाव नहीं होता। उसकी दृष्टि सदा एक समान सबका भला चाहने वाली होती है :

ब्रहम गिआनी सदा निरदोख ॥
जैसे सूरु सरब कउ सोख ॥
ब्रहम गिआनी कै द्रिसटि समानि ॥. . .
ब्रहम गिआनी कै मित्र सत्रु समानि ॥. . .
ब्रहम गिआनी सदा समदरसी ॥

(पन्ना २७२)

गुरमति के अनुसार सांझीवालता की भावना साधसंगत से प्राप्त होती है। साधुओं - महापुरुषों की संगत से मन में से द्वैत-भाव के भ्रम का नाश हो जाता है और मानव प्रभु के हुक्म में विचरण करता है। वह सब जीवों में एक ही प्रभु की ज्योति को देखता है। यह अवस्था एक दिन का काम नहीं, बल्कि लगातार अभ्यास के साथ आती है। रोज़ाना सतिसंग करने से अवगुणों का नाश होना शुरू हो जाता है और शुभ गुणों का प्रवेश मन में होने लग जाता है। इस विचार का प्रकटावा श्री गुरु अरजन देव जी कानड़ा राग में अति सुंदर ढंग से करते हैं :

बिसरि गई सभ ताति पराई ॥
जब ते साधसंगति मोहि पाई ॥१ ॥रहाउ ॥
ना को बैरी नही बिगाना
सगल संगि हम कउ बनि आई ॥१ ॥
जो प्रभ कीनो सो भल मानिओ
एह सुमति साधू ते पाई ॥१ ॥
सभ महि रवि रहिआ प्रभु एकै
पेखि पेखि नानक बिगसाई ॥ (पन्ना १२९९)

प्रभु नाम-सिमरन से भी मानव के अंदर सांझीवालता, भ्रातृ-भावना उत्पन्न होती है। मानव अपने अहं के कारण मैं-मेरी के प्रभाव में इस ख़्याल को भूल जाता है कि प्रभु सबके हृदय में है।

सिक्ख धर्म के अनुसार प्रभु एक है, केवल एक। उसी ने संसार की सृजना की है। वही इसकी संभाल करता है। वह सृजना कर कहीं अलग नहीं बैठा। वह प्रकाश रूप में हर जगह व्यापक है। उसका किसी ख़ास फ़िरके, नस्ल, देश, कौम के साथ कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। उसका प्रकाश सदा एक समान रहता है। प्रभु सबका है और सब उसके हैं। दसम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी फरमान करते हैं :

जिमी जमां के बिखे समसत एक जोति है ॥

ना बाढ है न घाट है ना बाढ घाट होत है ॥

(अकाल उसतति)

गुरमति ने प्रभु-एकता के निर्गुण स्वरूप के अलावा उसके गुणवान नामों में भी समानता और सांझीवालता का विचार दिखाया है। गुरु जी उसके सभी नामों पर कुर्बान जाते हैं। जब साधक के मन में से भ्रम का नाश हो जाता है तो वह अल्लाह और पारब्रह्म को एक ही समझ कर सम्मान देता है। श्री गुरु अरजन देव जी का कथन है :

कहु नानक गुरि खोए भरम ॥
एको अलहु पारब्रहम ॥ (पन्ना ८९७)

गुरु का शबद सर्वसांझीवालता का उपदेश देता है। गुरु का शबद सर्वव्यापक है। गरीब-अमीर को एक-सा अधिकार है कि अमृतमयी बाणी को पढ़े, सुने और जीवन में अपनाए। शबद को पढ़ने-सुनने का अधिकार केवल किसी ख़ास कथित उच्च जाति को ही नहीं है। शबद गुरु का दर्जा रखता है। शबद सबका साझा है। इसकी आराधना के बिना सारा जगत बावरा बना फिरता है:

सबदु गुर पीरा गहिर गंभीरा
बिनु सबदै जगु बउरानं ॥ (पन्ना ६३५)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की स्थापना सिक्ख धर्म के गुरुद्वारा साहिबान के अंदर होती है। इसकी पूजा और पाठ भी प्रत्येक सिक्ख के लिए साझा है। सिक्ख रहित मर्यादा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी जाति, भिन्न-भेद के गुरुद्वारा साहिबान के अंदर जा सकता है। श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री हरिमंदर साहिब श्री अमृतसर की आधारशिला रखवाने के लिए अल्लाह के प्यारे भक्त साँई मीयां मीर जी को बुलाया। इससे बड़ी और क्या सांझीवालता हो सकती है कि सिक्ख धर्म-स्थान की आधारशिला एक मुसलमान फ़कीर के हाथों रखवाई गई! श्री हरिमंदर साहिब के चार दरवाज़े भी विश्व भ्रातृ-भावना के प्रतीक हैं कि इसके अंदर लोग चारों दिशाओं से आ सकते हैं।

गुरुद्वारा साहिबान के अंदर संगत में भी बैठने के लिए कोई भिन्न-भेद नहीं होता। कोई व्यक्ति कहीं भी संगत में बैठ सकता है और ईश्वरीय बाणी, ईश्वरीय कीर्तन, कथा, प्रभु-यश सुन सकता है। गुरु साहिबान के समय जात-पांत, छुआ-छूत का भेदभाव एक बड़ी समस्या थी। ईश्वरीय बाणी, जो ईश्वरीय भाषा में लिखी गई मानी जाती थी, समाज के सब लोगों को एक साथ बैठ कर श्रवण करने का अधिकार नहीं था। बिलकुल, कहीं भी एक साथ बैठ कर श्रवण करने का अधिकार नहीं था। यह अधिकार केवल गुरु साहिबान ने दिया और सबको अपने जीवन का कल्याण

करने का अवसर प्रदान किया :

खत्री ब्राहमण सूद वैस
उपदेसु चहु वरना कउ साझा ॥ (पन्ना ७४७)

श्री गुरु नानक देव जी ने निर्मल पंथ की आधारशिला रखी। इसमें नाम-सिमरन करने, किरत करने, बाँट कर छकने के तीन बुनियादी नियमों को स्थापित किया। ये तीन नियम सिक्खी महल के स्तंभ हैं। ये तीन नियम मानव जीवन के आदर्श की संपूर्णता का राज़ हैं। इन्हें व्यवहार में लाने से समाज, देश, कौम के अंदर सांझीवालता का वातावरण पैदा हो सकता है। गुरमति में वर्ण-विभाजन नहीं है। तत्कालीन समाज में वर्ण-विभाजन और व्यवसाय का विभाजन किया गया था। यह समझा जाता था कि प्रत्येक वर्ण के लोगों का अपने वर्ण के अनुसार सौंपे गए कर्म को करना ही उनका धर्म है, जबकि गुरमति में ऐसा नहीं है। सिक्ख श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पाठ भी करता है और वह देश, कौम एवं धर्म की रक्षा के लिए जूझने वाला योद्धा भी है। व्यापार तथा अन्य व्यवसाय करता है साथ ही संगत के जोड़े (जूते) झाड़ने, गुरुद्वारा साहिबान परिसर में झाड़ू लगाने, बर्तनों आदि की सेवा भी करता है। वह न तो शूद्र होता है और न ही अन्य वर्णों के अनुसार क्षत्रिय, ब्राह्मण और वैश्य। वह तो केवल सिक्ख होता है। कहने से तात्पर्य यह है कि गुरमति के अनुसार सिक्ख की कोई जाति नहीं, कोई वर्ण नहीं। वह ज़िंदगी के विभिन्न पड़ाव पर किसी एक आश्रम को अपना कर दूसरों को छोड़ता नहीं। सिक्ख धर्म में आयु का विभाजन ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास के अनुसार नहीं होता। सिक्ख को शुरू से ही सभी कर्म रोज़मर्रा की ज़िंदगी में करने का उपदेश है। ऐसा नहीं कि वह एक सौ वर्ष की ज़िंदगी मान कर पहले पच्चीस बरस केवल ब्रह्मचारी रहे और फिर गृहस्थी, फिर तीसरे भाग में वानप्रस्थ और अंत में सन्यास धारण कर घर-बार का त्याग कर दे। सिक्ख हर समय चारों वर्णाश्रमों में बराबर विचरता है।

सिक्ख जहाँ अपने भले के लिए सुबह-शाम अरदास करता है, वहीं सरबत्त के भले के लिए भी प्रभु से सुबह-शाम यही मांग करता है कि नाम जपने वालों की चढ़दी कला हो और सरबत्त का भला हो। सब जीवों के लिए सुख-शांति की ख़ैर मांगना सर्वसांझीवालता का उच्च प्रमाण है और सांझीवालता की पराकाष्ठा है। अपने आप से ऊँचा उठ कर दूसरों का भला चाहना सच्चे व विशुद्ध मानव का ही कर्तव्य है :

नानक नाम चढ़दी कला।
तेरे भाणे सरबत्त दा भला।

दुखु दारू सुखु रोगु भइआ

-डॉ. परमजीत कौर*

दुख तथा सुख दोनों जीवन के महत्त्वपूर्ण अंग हैं। दुख के बाद सुख तथा सुख के बाद दुख, यह चक्र चलता ही रहता है :

सुखु दुखु दुइ दरि कपड़े पहिरहि जाइ मनुख ॥
(पन्ना १४९)

सांसारिक भोग-विलास तथा धनादि को ही सुख का साधन समझने वाला मनुष्य दुख में डगमगा जाता है, घबरा जाता है, इसलिए सदा सुख की ही कामना करता रहता है। गुरमति में दुख को दारू तथा सुख को रोग कहा गया है :

दुखु दारू सुखु रोगु भइआ
जा सुखु तामि न होई ॥ *(पन्ना ४६९)*

यहां यह विचारणीय तथ्य है कि सुख क्यों रोग बन जाता है और दुख कैसे दारू (दवा) बनता है ?

जैसे-जैसे मनुष्य को सांसारिक सुख प्राप्त होते हैं वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों में लिप्त होता जाता है तथा परमात्मा से दूर हो जाता है :

जेता मोहु परीति सुआद ॥
सभा कालख दागा दाग ॥
दाग दोस मुहि चलिआ लाइ ॥
दरगह बैसण नाही जाइ ॥ *(पन्ना ६६२)*

अधिक सुखों की लालसा से मनुष्य मन्द कर्मों में प्रवृत्त होता जाता है। यह लालसा मन को मलिन कर देती है तथा अहंकार का कारण भी बनती है। जैसे शिकारी रात के समय हिरन को जाल में फंसाने के लिए चांद जैसा प्रकाश करता है तथा हिरण प्रकाश देख कर शिकारी के जाल में फंस जाता है, वैसे ही मनुष्य मायावी पदार्थों की चमक देखकर उसके जाल में फंसता जाता है, मगर जिन सुखों के लिये फंसता है वे सुख दुख का कारण बन जाते हैं। मनुष्य नित्य पाप-कर्म करता है तथा दुखी होता है :

फाथोहु मिरग जिवै पेखि रैणि चंद्राइणु ॥
सूखहु दूख भए नित पाप कमाइणु ॥
(पन्ना ४६०)

श्री गुरु अरजन देव जी विस्तार से समझा रहे हैं कि जीव ने जिंदगी भर दुनिया के पदार्थों को मधुर समझ कर खाया। उस मीठे ने शरीर में रोग पैदा कर दिए। वे रोग दुखदायी होकर शरीर में पक्का टिक गये तथा चिंता एवं दुख का कारण बन गये :

*६२०, गली नं. १, छोटी लाईन, संतपुरा, यमुनानगर (हरियाणा)— १३५००१, फोन : ९८१२३-५८१८६

मिठा करि कै खाइआ पिआरे
तिनि तनि कीता रोगु ॥
कउड़ा होइ पतिसटिआ पिआरे
तिस ते उपजिआ सोगु ॥ *(पन्ना ६४१)*

इस प्रकार परमात्मा को भूल कर किए गए भौतिक सुखों के भोग मानसिक अशांति, शारीरिक रोग तथा आत्मिक पतन का कारण बन जाते हैं। परमात्मा जीवों के अंदर से मन्द संस्कारों को निकालने के लिए उनको दुख रूपी कोल्हू में डालकर मानों तेल निकालने के समान व्यवहार करता है :

दरि लए लेखा पीड़ि छुटै नानका जिउ तेलु ॥
(पन्ना ४७३)

दुख मनुष्य को परमात्मा के साथ जोड़ते हैं। जब जीवन में दुख आते हैं तो प्रत्येक जीव बार-बार प्रभु को याद करता है। उसका मन विषय-विकारों से हट जाता है। वह अकाल पुरख परमात्मा का गुण-कीर्तन करता है। उसका मन संतुष्ट होता चला जाता है। परमात्मा को बार-बार याद करने से प्रभु से प्रेम हो जाता है, मन उदार हो जाता है, पदार्थों की पकड़ ढीली हो जाती है, तृष्णा की भूख समाप्त हो जाती है। इस तरह जीवन में आए हुए दुख सुख का आधार बन जाते हैं :

दूखा ते सुख ऊपजहि सूखी होवहि दूख ॥
जितु मुखि तू सालाहीअहि
तितु मुखि कैसी भूख ॥ *(पन्ना १३२८)*

सांसारिक दुख भी परमात्मा की कृपा का द्वार बन जाते हैं। दुख रूपी दारू से माया की भूख समाप्त हो जाती है, हउमै का रोग कट जाता है तथा सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, इसलिए दुख को भी परमात्मा की देन कहा गया है :

केतिआ दूख भूख सद मार ॥
एहि भि दाति तेरी दातार ॥ *(पन्ना ५)*

श्री गुरु नानक देव जी इसको विस्तार से समझाते हैं कि दुनिया के दुख-क्लेश इंसान के जीवन के लिए जहर हैं, लेकिन यदि इस जहर को ठीक (कुसता) करने के लिए प्रभु के नाम को जड़ी-बूटी व मसाले के स्थान पर प्रयोग में लाया जाये, उसको बारीक करने के लिए संतोष का पत्थर बनाया जाये तथा जरूरतमंदों की सहायता करने के लिए दान को अपने हाथ में पीसने वाला बट्टा बना लें, इस प्रकार तैयार किया गया पदार्थ सदा खाते रहें, तो मानव-जीवन से नीचे वाली योनियों में जाने से स्वयं को बचा सकते हैं। 'दुख दारू' मनुष्य को विकार-ग्रस्त रास्ते से हटाकर प्रभु के समीप ले जाता है :

दुख महुरा मारण हरि नामु ॥
सिला संतोख पीसणु हथि दानु ॥
नित नित लेहु न छीजै देह ॥
अंत कालि जमु मारै ठेह ॥१ ॥
ऐसा दारू खाहि गवार ॥
जितु खाधै तेरे जाहि विकार ॥ *(पन्ना १२५६)*

यहां प्रश्न यह उठता है कि यदि किसी मनुष्य के जीवन में दुख ही दुख हों तो वह दुख को दारू कैसे समझे ?

यह ठीक है कि मनुष्य को दुख तथा सुख रूपी फल उसको अपने कर्मों के अनुसार ही प्राप्त होता है। गुरु-वाक्य है :

— आपे बीजि आपे ही खाहु ॥ (पन्ना ४)

— करमा उपरि निबड़ै जे लोचै सभु कोइ ॥

(पन्ना १५७)

गुरमति के अनुसार कर्म अमिट नहीं हैं, अटूट नहीं हैं। कर्म फल का कारण बनते हैं। फल परमात्मा के हुक्म के अनुसार मिलता है। परमात्मा कर्मों की परख करता है, उनका तौल करता है, उनकी पड़ताल करता है :

हुकमि चलाए आपणै करमी वहै कलाम ॥

(पन्ना १२४१)

मनुष्य भूल करने वाला है, बार-बार भूल करता है। मनुष्य प्रभु के हुक्म के अंदर चलता हुआ अकाल पुरख वाहिगुरु की प्रसन्नता प्राप्त कर सकता है। परमात्मा दयालु है, कृपालु है, क्षमाशील है :

— असंख खते खिन बखसनहारा ॥

नानक साहिब सदा दइआरा ॥ (पन्ना २६०)

— जिन्ही पछाता हुकमु तिन्ह कदे न रोवणा ॥

(पन्ना ५२३)

बुरे कर्मों के फल को काटने में नाम समर्थ है। नाम ही हुक्म-रज़ा में चलना सिखाता है। दुख परमात्मा के साथ जोड़ता है, नाम में चित्त को लगाता है, इसलिए दुख दारू बन जाता है। ज्यादा दुखों से परेशान होकर यह नहीं सोचना चाहिए कि परमात्मा को हमारे साथ कोई वैर है, रंजिश है। परमात्मा तो निरवैर है। परमात्मा द्वारा दिए गए दुख मनुष्य को दण्ड देने के लिए नहीं, उसको प्रभु के साथ जोड़ने के लिए ही होते हैं। जैसे-जैसे अंदर नाम बसता है, अंत:करण पवित्र होता जायेगा तथा बुरे संस्कार, जो कर्म बनते हैं, मिटते जायेंगे। इस प्रकार दुखी मनुष्य का दुख दूर हो जाएगा।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि जिस मनुष्य के लिए दुख दारू बन जाता है, वह प्रभु के प्रेम-रंग में रंग जाता है। प्रभु की कृपा-दृष्टि से उसका मन शांत हो जाता है। दुख, रोग, संताप समाप्त हो जाते हैं। नाम जीवन का आधार बन जाता है। तृष्णा नहीं रहती। अहं रोग कट जाते हैं। आत्मिक आनन्द में विचरण करते हुए मन-तन निरोग हो जाते हैं :

खुदी मिटी तब सुख भए मन तन भए अरोग ॥

नानक द्रिसटी आइआ उसतति करनै जोगु ॥

(पन्ना २६०)

अमर शहीद सरदार सेवा सिंघ ठीकरीवाला

*-स. जगजीत सिंघ ठीकरीवाला**

सिंघ सभा लहर, अकाली लहर (गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर) और रियासती प्रजा-मंडल लहर के प्रसिद्ध अगुआ, अमर शहीद सरदार सेवा सिंघ ठीकरीवाला का जन्म २४ अगस्त, १८८६ ई. को गाँव ठीकरीवाला (जिला बरनाला) के एक अमीर परिवार में, सरदार देवा सिंघ तथा माता हर कौर के घर हुआ। स. सेवा सिंघ ने अपनी प्राथमिक शिक्षा अपने पिता जी के पास पटियाला रह कर प्राप्त की, जो उस समय की पटियाला रियासत के राजा के एक उच्चाधिकारी (अहलकार) थे। कुछ समय रियासत पटियाला के स्वास्थ्य विभाग में सेवा करने के पश्चात् सरदार सेवा सिंघ अपने पैतृक गाँव ठीकरीवाला आ गए। सिंघ सभा लहर के प्रभाव में अमृत-पान कर आप सिंघ सज गए। इसके बाद आपने सिक्ख धर्म के प्रचार, समाज-सुधार, शैक्षिक-पसार और राष्ट्रीय आज़ादी के लिए संघर्ष करने को ही अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य बना लिया। आपने अपने गाँव ठीकरीवाला में उस स्थान पर गुरुद्वारा साहिब की इमारत के निर्माण का काम अपनी निगरानी में मुकम्मल करवाया, जहाँ अठारहवीं सदी के प्रसिद्ध सिक्ख अगुआ नवाब कपूर सिंघ ने पटियाला रियासत के संस्थापक बाबा आला सिंघ की विनती स्वीकार करते हुए बुड्ढा दल के जत्थे सहित कुछ समय के लिए पड़ाव किया था। उसी समय बाबा आला सिंघ और उनके परिवार ने नवाब जी के जत्थे से अमृत-पान किया था।

अकाली लहर के जैतो के मोर्चे के समय १९२३ ई. में जब अंग्रेज़ सरकार ने शिरोमणि अकाली दल और शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर को ग़ैरकानूनी जत्थेबंदी करार दे दिया था और इन दोनों जत्थेबंदियों से सम्बन्धित सभी अकाली नेताओं की गिरफ्तारी के हुक्म जारी कर दिए थे, उस समय सरदार सेवा सिंघ को भी गुरुद्वारा श्री मुक्तसर साहिब से गिरफ़्तार कर लिया गया। उस समय आप शिरोमणि अकाली दल के उपाध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर की कार्यकारिणी कमेटी के सदस्य तथा रियासत पटियाला के अकाली जत्थे के प्रधान के रूप में सेवा कर रहे थे। इसके बाद आपको पचास से अधिक प्रमुख अकाली नेताओं सहित तीन वर्ष के लगभग लाहौर के किले में बनाई गई विशेष जेल में नज़रबंद रखा गया। १९२५ ई. में गुरुद्वारा एक्ट बनने के पश्चात सितंबर १९२६ ई. में

**गांव-डाकखाना : ठीकरीवाला, जिला : बरनाला— १४८१०१*

लाहौर जेल से रिहा होते ही आपको रियासत पटियाला की पुलिस ने पुन: गिरफ़्तार कर लिया और आपके विरुद्ध प्रशासक बरनाला की अदालत में डेरा बाबा गांधा सिंघ बरनाला का एक लोटा चोरी करने का झूठा इल्जाम लगा कर मुकद्दमा बनाया गया। जब उक्त डेरे के महंत बाबा रघबीर सिंघ ने बयान दिया कि उसके डेरे का कोई लोटा चोरी नहीं हुआ तो उक्त मुकद्दमा तो ख़ारिज हो गया, परंतु आपको जेल से रिहा न किया गया। आपको बिना किसी मुकद्दमे के ही लगभग तीन वर्ष (१९२६ ई. से १९२९ ई.) तक पटियाला केंद्रीय जेल में नज़रबंद रखा गया।

उस समय की सभी राष्ट्रीय जत्थेबंदियों के संघर्ष के फलस्वरूप आपको अगस्त, १९२९ ई. में पटियाला जेल से बिना शर्त रिहा किया गया। इस समय तक आप पंजाब और हरियाणा रियासती प्रजा-मंडल के प्रधान तथा अकाल कॉलेज मसतूआणा साहिब की प्रशासनिक समिति के प्रधान चुने गए। अक्तूबर १९३० ई. में पंजाब रियासती प्रजा-मंडल की लुधियाना कान्फ्रेंस में भाग लेने के दोष में पटियाला रियासत की पुलिस ने आपको फिर गिरफ़्तार कर लिया और पाँच वर्ष कैद तथा एक हज़ार रुपए जुर्माने की सज़ा सुना कर पटियाला जेल में नज़रबंद कर दिया। राष्ट्रीय जत्थेबंदियों के संघर्ष के फलस्वरूप आपको चार महीने बाद ही पटियाला जेल से बिना शर्त रिहा कर दिया गया। नवंबर, १९३१ ई. में रियासत ज़ींद (संगरूर) की सरकार के विरुद्ध लगे अकाली मोर्चे में आपने चार महीने की कैद काटी। जुलाई १९३२ ई. में रियासत मलेरकोटला की सरकार के विरुद्ध चले कुठाला किसान आंदोलन में आपने तीन महीने की कैद काटी थी।

१९३३ ई. में पंजाब रियासती प्रजा-मंडल की दिल्ली कान्फ्रेंस और गाँव खुडिआल (सुनाम) की अकाली कान्फ्रेंस में भाग लेने के जुर्म में रियासत पटियाला की पुलिस ने आपको फिर गिरफ़्तार कर लिया और प्रशासक बरनाला की अदालत में मुकद्दमा चला कर, दस वर्ष की कैद और दो हज़ार रुपए जुर्माने की सज़ा सुनाई गई। केंद्रीय जेल पटियाला में ज़िले के उच्चाधिकारियों और रियासत पटियाला के शासकों के जब्र-जुल्म एवं धक्केशाही के विरुद्ध आपने अप्रैल, १९३४ ई. में जेल में ही भूख-हड़ताल शुरू कर दी। नौ महीने की लंबी भूख-हड़ताल के बाद १९-२० जनवरी, १९३५ ई. की मध्य रात्रि को एक बजे के लगभग आपने शहादत प्राप्त कर ली।

सरदार सेवा सिंघ अमीर परिवार से संबंध रखते थे, परन्तु उन्होंने अमीरी जीवन के सब सुख त्याग कर सिक्ख धर्म के प्रचार और देश की आज़ादी के संघर्ष का रास्ता अपनाया। आप गुरबाणी के रंग में रंगे हुए सच्चे सिक्ख और अनुकरणीय अकाली अगुआ थे।

ख़बरनामा

पंथ-विरोधी शक्तियों के मुकाबले के लिए एकजुट हो सिक्ख कौम : एडवोकेट धामी

श्री अमृतसर : २५ फरवरी : श्री गुरु नानक देव जी के प्रकाश-स्थान गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब (पाकिस्तान) में फरवरी १९२१ ई. में घटित ख़ूनी साके के शहीदों की याद में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से गुरदासपुर के नगर गोधरपुर में विशाल गुरमति समागम करवाया गया। नगर गोधरपुर में श्री ननकाणा साहिब के साके के शहीद भाई लछमण सिंघ धारोवाली का परिवार आकर बसा था और इसी स्थान पर गत वर्ष साके का प्रथम शताब्दी समागम खालसाई रिवायतों के आधार पर विशाल स्तर पर आयोजित किया गया था। इस बार १०१वें वर्ष में करवाए गए समागम के दौरान शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान एडवोकेट सरदार हरजिंदर सिंघ धामी ने एलान किया कि इस नगर में प्रत्येक वर्ष शहीदी साके की याद मनायी जाया करेगी और इसके अलावा साके के अन्य सभी शहीदों के नगरों में भी समागम आयोजित किए जाएंगे। उन्होंने कहा कि श्री ननकाणा साहिब सिक्ख कौम का जन्म-स्थान है। इसे १०० वर्ष पूर्व ऐयाश महंतों से आज़ाद करवाने के लिए खालसा पंथ ने बड़ी कुर्बानियां दी थीं। उन्होंने कहा कि साका श्री ननकाणा साहिब के शहीद हमारे मार्गदर्शक हैं। उन्होंने जिस दृढ़ता के साथ गुरुधाम को आज़ाद करवाया, वह सिक्खी जज़्बे को प्रचंड रखने की दासतां बन गई। एडवोकेट धामी ने कहा कि आज भी बहुत-सी पंथ-विरोधी शक्तियां पंथक संस्थाओं को कमज़ोर करने पर तुली हुई हैं, जिनका एकजुटता के साथ मुकाबला करना समय की ज़रूरत है। उन्होंने कहा कि श्री अकाल तख़्त साहिब के नेतृत्व में समूची सिक्ख कौम एकत्र होकर सिक्खी की चढ़दी कला के लिए यत्न करे तथा नौजवानों एवं बच्चों को सिक्ख विरासत के साथ जोड़ने के लिए आगे आए।

समागम के दौरान सचखंड श्री हरिमंदर साहिब के मुख्य ग्रंथी सिंघ साहिब ज्ञानी जगतार सिंघ, कथावाचक ज्ञानी जसवंत सिंघ, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की कार्यकारिणी कमेटी के सदस्य जत्थेदार गुरिंदरपाल सिंघ गोरा ने भी संगत को गुरमति विचारों से अवगत करवाया। सचखंड श्री हरिमंदर साहिब के रागी जत्थों ने गुरबाणी-कीर्तन किया। इस अवसर पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान एडवोकेट हरजिंदर सिंघ धामी तथा सिंघ साहिब ज्ञानी जगतार सिंघ द्वारा प्रमुख शख़्सियतों को गुरु-बख़शीश सिरोपायो देकर सम्मान दिया गया।

इस अवसर पर श्री अकाल तख़्त साहिब के मुख्य ग्रंथी भाई मलकीत सिंघ, वरिष्ठ अकाली

नेता स. रविकरन सिंघ (काहलों), पूर्व महासचिव एडवोकेट भगवंत सिंघ सिआलका, धर्म प्रचार कमेटी के सदस्य भाई अजाइब सिंघ अभ्यासी, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सदस्य स. गुरनाम सिंघ (जस्सल), स. सुरजीत सिंघ तुगलवाल, स. गुरिंदर सिंघ शामपुरा, स. रतन सिंघ जफ्फरवाल, स. कुलदीप सिंघ तेड़ा, स. गुरइकबाल सिंघ माहल, स. जसबीर सिंघ घुंमण, स. सुखबीर सिंघ वाहला, सचिव स. परमजीत सिंघ सरोआ, स. कुलविंदर सिंघ रमदास, स. सतबीर सिंघ धामी, मैनेजर इकबाल सिंघ मुखी, स. गुरतिंदरपाल सिंघ, स. रणजीत सिंघ कल्याणपुर, स. करतार सिंघ, स. मनजीत सिंघ, स. सतनाम सिंघ रिआड़, बाबा तरनजीत सिंघ निक्केघुंमण, स. गुरविंदर सिंघ प्रधान गुरुद्वारा शहीद भाई लछमण सिंघ, स. दलबीर सिंघ सरपंच गोधरपुर, स. सतपाल सिंघ, स. कुलदीप सिंघ, स. मसविंदर सिंघ, स. जरनैल सिंघ, स. अवतार सिंघ, स. लखबीर सिंघ, हेंड प्रचारक भाई जसविंदर सिंघ शहूर, भाई जगदेव सिंघ, भाई तरसेम सिंघ, भाई रणजीत सिंघ, भाई गुरविंदर सिंघ, भाई गुरमुक्ख सिंघ सहित बड़ी संख्या में संगत उपस्थित थी।

कर्नाटका में सिक्ख लड़के को स्कूल द्वारा दाख़िला न देने की एडवोकेट धामी ने की सख़्त निंदा

श्री अमृतसर : २६ फरवरी : कर्नाटका के मंगलुरू में छः वर्षीय सिक्ख लड़के को दसतार सजाने के कारण एक स्कूल द्वारा दाख़िला न देने को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान एडवोकेट सरदार हरजिंदर सिंघ धामी ने सिक्खों की धार्मिक आज़ादी पर हमला करार दिया है। उन्होंने कहा कि इससे पहले कर्नाटका में ही एक कॉलेज द्वारा अमृतधारी गुरसिक्ख लड़की को दसतार सजाने के कारण क्लास में न बैठने के लिए कहा गया था और अब एक छोटे बच्चे को स्कूल में दाख़िला देने से मना किया गया है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान ने कहा कि यह घटनाक्रम देश के संविधान का उल्लंघन है, क्योंकि भारत का संविधान हर एक को धार्मिक आज़ादी देता है। उन्होंने कर्नाटका के मुख्यमंत्री श्री बसवराज बोमयी को राज्य में सिक्खों के विरुद्ध ऐसी कार्यवाहियां रोकने के लिए ठोस कदम उठाने के लिए कहा। एडवोकेट धामी ने कहा कि कर्नाटका में सिक्खों की धार्मिक आज़ादी को दबाया जा रहा है, जिसे बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। उन्होंने कहा कि कर्नाटका में ऐसे सिक्ख मसलों को लेकर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का एक शिष्टमंडल जल्द ही वहाँ के मुख्यमंत्री से मिलने के लिए जायेगा, जिसके लिए मुलाकात का समय निर्धारित करने के लिए मुख्यमंत्री श्री बसवराज बोमयी को पत्र लिखा गया है।

इसी दौरान शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान ने दिल्ली में विद्यार्थियों को धार्मिक

पहनावे में स्कूल न आने की हिदायत पर भी सख़्त एतराज़ प्रकट किया है। उन्होंने कहा कि दक्षिणी दिल्ली नगर निगम की तरफ से अपने शिक्षा विभाग के अधिकारियों को ऐसी हिदायतें जारी करना निंदनीय है। उन्होंने कहा कि विद्यार्थियों में मतभेद और असमानता के नाम पर धार्मिक सरोकारों एवं अधिकारों का उल्लंघन किया जा रहा है। भारत सरकार को हर राज्य को सख़्त हिदायत जारी करते हुए यह स्पष्ट करना चाहिए कि किसी की धार्मिक भावनाओं और धार्मिक आज़ादी को ठेस न पहुँचे। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान ने इसके साथ ही केंद्र सरकार द्वारा भाखड़ा ब्यास मैनेजमेंट बोर्ड में से पंजाब की शर्तिया नुमाइंदगी ख़त्म करने को भी पंजाब के अधिकारों पर डाका डालना करार दिया है। उन्होंने कहा कि ऐसे भेदभावपूर्ण व्यवहार पर रोक लगाने के लिए भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी को संजीदा भूमिका निभानी चाहिए।

सिक्खों सहित हर धर्म के लोगों की धार्मिक भावनाओं का ख़्याल रखे भारत सरकार : एडवोकेट धामी

श्री अमृतसर : १४ मार्च : भारत सरकार द्वारा देश के हवाई अड्डों पर सिक्ख कर्मचारियों को कृपाण सहित ड्यूटी करने से रोकने वाला आदेश वापस ले लिया गया है। भारत के नागर उड्डयन मंत्रालय द्वारा एक नोटिफिकेशन जारी कर देश भर में हवाई अड्डों पर अमृतधारी सिक्ख कर्मचारियों को कृपाण पहन कर ड्यूटी करने से मना किया गया था, जिसका शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा सख़्त नोटिस लिया गया था। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान एडवोकेट सरदार हरजिंदर सिंघ धामी ने नागर उड्डयन मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया को ९ मार्च को पत्र लिख कर सख़्त एतराज़ प्रकट करते हुए कहा था कि यह सिक्खों की धार्मिक आज़ादी पर सीधा हमला है, लिहाज़ा इस नोटिफिकेशन को तुरंत वापस लिया जाये। भारत सरकार की तरफ से जारी संशोधन आदेश को लेकर एडवोकेट धामी ने कहा कि चाहे सर्कुलर में संशोधन करना अच्छी बात है, परन्तु ऐसा नोटिफिकेशन जारी करने से पहले भारत सरकार को अवश्य सोचना चाहिए था। उन्होंने कहा कि सिक्ख भारत के लिए हमेशा लड़ते और शहादत देते रहे हैं। सरकारों को भी यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि देश का सभ्याचार सिक्खों की कुर्बानियों के कारण ही जिंदा है। एडवोकेट धामी ने भारत सरकार से कहा कि आगे से यह ख़्याल रखा जाये कि सिक्खों सहित किसी भी धर्म के लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने जैसी कार्यवाही न की जाये और यह यकीनी बनाया जाये कि देश का निवासी हर नागरिक अपनी धार्मिक आज़ादी का अधिकार रखता है।

गुरुद्वारा जन्म-स्थान भक्त धंना जी

धूआन (राजस्थान)

Registered with RNI at No. PUNHIN/2007/21665

Postal Registration No. L-1/PB-ASR/008/2020-22 Licensed to Post without Pre-Payment No. PB/R-001/2020-22

GURMAT GYAN

April 2022

DHARAM PARCHAR COMMITTEE,

Shiromani Gurdwara Parbandhak Committee, Sri Amritsar Sahib (PUNJAB)

तख्त श्री केसगढ़ साहिब, श्री अनंदपुर साहिब

Owner : Shiromani Gurdwara Parbandhak Committee. Publisher & Printer : S. Manjit Singh. Printed at Golden Offset Press, Gurdwara Sri Ramsar Sahib, Sri Amritsar. Published from SGPC office, Teja Singh Samundri Hall, Sri Amritsar. Editor : Satwinder Singh

Date: 7-4-2022